सैंटर फॉर डिस्टैंस एंड आनलाईन ऐजुकेशन
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

कक्षा : एम.ए. भाग–2 *सैमेस्टर–3*

पत्र : पहला (आधुनिक हिन्दी काव्य–1) *एकांश संख्या : 1*

माध्यम : हिन्दी

पाठ नं.

1.1 मैथिलीशरण गुप्त : काव्यगत विशेषताएं, महाकाव्यत्व और अभिव्यंजना कौशल

1.2 जयशंकर प्रसाद

1.3 कामायनी की दार्शनिकता, समरसता

1.4 निराला का काव्य सौष्ठव और सप्रसंग व्याख्या

Department website : www.pbidde.org

M.A IInd
Sem - III

2022-2023 तथा 2023-2024 सैशन के लिए
(रैगुलर, डिस्टैंस ऐजुकेशन और प्राइवेट विद्यार्थियों के लिए)

प्राईवेट विद्यार्थियों के लिए
पूर्णांक : 100
समय : 3 घण्टे
पास प्रतिशत : 35

रैगुलर,डिस्टैंस ऐजुकेशन विद्यार्थियों के लिए
लिखित परीक्षा : 75 अंक
आंतरिक मूल्यांकन : 25 अंक
पास अंक : लिखित में 26
आंतरिक मूल्यांकन : 9
समय : 3 घण्टे

पेपर पहला
आधुनिक हिन्दी काव्य–1 (HINM2PUP-T-301)

उद्देश्य :–

1. विद्यार्थियों को साहित्य में आए परिवर्तनों से अवगत करवाना।
2. विद्यार्थियों को आधुनिक कवियों के काव्य से परिचित करवाना।
3. आधुनिक हिन्दी काव्य के नवीन रूपों तथा भाषा से परिचित करवाना।

अधिगम प्रतिफल :–

1. विद्यार्थियों की आधुनिक हिन्दी काव्य में रुचि उत्पन्न होगी।
2. विद्यार्थी आधुनिक काव्य की प्रवृत्तियों से अवगत होंगे।
3. विद्यार्थी साहित्य के माध्यम से समाज की परिस्थितियों से अवगत होंगे।

निर्धारित पाठ्यक्रम

(1) मैथिलीशरण गुप्त, 'साकेत' (केवल नवम् सर्ग) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

(2) जयशंकर प्रसाद – 'कामायनी' (केवल चिन्ता सर्ग), राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली।

(3) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला – 'राग विराग' काव्य संग्रह (तीन कविताएं :– जागो फिर एक बार :2, राम की शक्ति पूजा, कुकुरमुत्ता) (सं. रामविलास शर्मा), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

छात्रों और परीक्षकों के लिए निर्देश

1. प्रथम खण्ड सप्रसंग व्याख्या से संबंधित होगा, जिसमें प्रत्येक रचना से दो–दो व्याख्याएँ 'अथवा' के विकल्प रूप में पूछी जाएंगी। पाठ्यक्रम से किसी भी रचनाकार को छोड़ा नहीं जा सकता। तीनों कवियों की एक–एक व्याख्या अनिवार्य है।

अंक (3×6 =18) **रै॰ तथा डि. ए**

(3×8= 24) **प्रा॰**

2. निर्धारित कवियों/रचनाओं से सम्बद्ध अथवा रूपी विकल्प के साथ छह आलोचनात्मक प्रश्न पूछे जायेंगे। परीक्षार्थी को किन्हीं तीन का उत्तर देना होगा। उल्लेखनीय है कि आलोचनात्मक प्रश्न पाठ्यक्रम में निर्धारित लेखकों की मूल रचनाओं के खंड विशेष (Text Book) तक ही सीमित न रखकर संबंधित लेखक की मूल रचना के संपूर्ण संदर्भ तथा उसके संपूर्ण रचनाकर्म पर भी केन्द्रित हों।

अंक (3×9 =27) **रै॰ तथा डि. ए**

(3×12= 36) **प्रा॰**

3. रैगुलर तथा डिस्टैंस ऐजुकेशन के विद्यार्थियों से छह तथा प्राईवेट विद्यार्थियों से आठ लघु प्रश्न (जिनके उत्तर छह–सात पंक्तियों तक सीमित हों) पूरे पाठ्यक्रम से बिना विकल्प के पूछे जाएंगे। सभी का उत्तर देना अनिवार्य होगा।

अंक (6×5 =30) **रै॰ तथा डि. ए.**

(8×5= 40) **प्रा॰**

अध्ययन के लिए सहायक पुस्तक–सूची

1. साकेत : एक अध्ययन– डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

2. कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन– डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना।

3. प्रसाद प्रतिभा– इन्द्रनाथ मदान, हिन्दी बुक सैंटर, दिल्ली।

4. निराला : रामविलास शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।

5. निराला : एक आत्महंता आस्था – दूधनाथ सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

Updated on June, 2023

एम॰ए॰ (हिन्दी) भाग–दूसरा | सैमेस्टर-**IIIrd** पत्र : पहला

आधुनिक हिन्दी काव्य–**1**

पाठ संख्या : **1.1** | लेखिका : डॉ. सुरिन्द्रपाल कौर

मैथिलीशरण गुप्त : काव्यगत विशेषताएं, महाकाव्यत्व और अभिव्यंजना कौशल

इकाई की रूपरेखा

1.1.0 उद्देश्य

1.1.1 प्रस्तावना

1.1.2 काव्यगत विशेषताएं

1.1.3 साकेत की कथावस्तु

1.1.4 साकेत महाकाव्यत्व

1.1.5 साकेत का अभिव्यंजना कौशल

  1.1.5.1 स्वयं जांच अभ्यास

1.1.6 सारांश

1.1.7 प्रश्नावली

1.1.8 सहायक पुस्तकें

1.1.0 उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप मैथिलीशरण गुप्त के विषय में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे। आप यह भी जान सकेंगे कि गुप्त को राष्ट्रीय कवि क्यों कहा जाता है। वो कौन सी काव्यगत विशेषताएँ जो उन्हें एक महान् कवि बनाती हैं।

1.1.1 प्रस्तावना :

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिन्दी कविता के प्रतिनिधि कवि हैं। भारतीय समाज में राजनैतिक जागरण से पूर्व जो सामाजिक चेतना हमारे धर्मसुधार को तथा समाज सुधारकों – जैसे, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद तथा विवेकानंद आदि ने तथा साहित्यकारों ने जगाई थी, उसका पूर्ण प्रतिनिधित्व गुप्त की रचना 'भारत–भारती' में पाया जाता है। इसमें गुप्त ने समाज की सभी बुराइयों, नैतिक पतन तथा धर्मिक आडम्बरों का वर्णन किया। हिन्दी खड़ीबोली के साहित्य भंडार को जिन साहित्यकारों ने सम्पन्न किया उनमें गुप्त का नाम अग्रणी है। इन्हें भारतीय संस्कृति के आख्यात माना जाता है। ये नैतिकता एवं मर्यादा के पोषक, राष्ट्रीयता के प्रबल प्रचारक एवं समाज सुधारक थे। इनके काव्य में

बीसवीं शताब्दी का सम्पूर्ण भाव–बोध पाया जाता है। स्वतंत्राता के लिए संघर्ष प्रेरणा, राष्ट्रप्रेम, जातीय एकता, अतीत गौरव का गुणगान, नव सांस्कृतिक जागरण आदि इनके काव्य की मुख्य प्रवृत्तियां रही हैं। इन्होंने भारतीय ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथाओं को अपना कर प्रबन्ध काव्यों की रचना की जिनमें भारतीय संस्कृति का भव्य रूप मिलता है। 1906 में इनकी रचनाएं सरस्वती में प्रकाशित होने लगीं। रंग में भंग इनका प्रथम काव्य संग्रह जो 1909 में प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात् इनकी प्रकाशित रचनाओं की सूची इस प्रकार है :– साकेत (1931), जयभारत (1952), यशोधरा, कुणाल गीत, द्वापर, सिद्धराज, विष्णु प्रिया, जयद्रथ वध ा, पंचवटी नहुष।

1.1.2 काव्यगत विशेषताएं :

गुप्त के काव्य में भारतवासियों में आत्महीनता के स्थान पर आत्म–गौरव की भावना उत्पन्न करने का प्रयास है और अतीत जीवन की अनेक झाँकियों से वर्तमान जीवन को प्रेरणा प्रदान की गयी है। इनकी रचनाओं में सभी धर्मों के प्रति आस्था एवं श्रद्धा व्यक्त की गयी है और मानव–मानव के बीच प्रेम एवं एकता का भाव जगाया गया है। इन्होंने साम्प्रदायिकता को दूर करने का प्रयास किया। इसीलिए इन्हें राष्ट्रकवि की उपाधि दी जाती है। इन्होंने आधुनिक हिन्दी कविता की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक धारा का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व किया। इनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं– रंग में भंग, जयद्रथ वध, भारत भारती, किसान, शकुन्तला, पंचवटी, हिन्दू, त्रिापथगा, गुरुकुल, साकेत, श्योधरा, नहुष, जयभारत और विष्णुप्रिया। इनमें पंचवटी एक खंडकाव्य है। गुरुकुल आख्यानक शैली में लिखा गया निबन्ध काव्य है और यशोधरा एक चम्पू काव्य है। साकेत इनका कीर्ति–स्तंभ है। इसमें उनकी काव्य–शक्ति, कला–कौशल, जीवन दर्शन, नवजागरण तथा पुनरुत्थानवादी चेतना प्रकाशित हुई है। यह उनके साहित्य–जीवन की चरम सीमा है। यह राम काव्य है। इस रचना का मूलाधार जन–जन में व्याप्त राम कथा है। यह बारह सर्गों का महाकाव्य है जिसमें गुप्त ने राम के चरित्रा सम्बन्धी नवीन उद्भावनाओं को उजागर किया है। इस रचना में युग की संचित भावनाओं, मान्यताओं, रीतिरिवाजों तथा राष्ट्र के उत्थान सम्बन्धी विचारों को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। विविध भावों तथा रसों से परिपूर्ण इस ग्रंथ में कवि ने प्रकृति की मनोरम छटा भी अंकित की है। गुप्त का साहित्य उदात्त, महान तथा राष्ट्रप्रेम से परिपूर्ण होने के साथ–साथ सरस, कलात्मक और भावपूर्ण है।

काव्यगत विशेषताएं– यहां हम गुप्त के काव्य की प्रमुख विशेषताओं पर विचार करेंगें–

1. **भावों की विविधता–** गुप्त का सम्पूर्ण काव्य–साहित्य विषय और भावों की विविधता का काव्य है। इनकी रचनाओं में श्रृंगार, वात्सल्य, देशप्रेम, भक्ति, मानवप्रेम और प्रकृति प्रेम आदि विशेष रूप में पाए जाते हैं। इन्होंने करुण, वीर, हास्य, वीभत्स तथा शांत रस का सुन्दर–प्रयोग किया है। भावों की सात्विक और पवित्रा योजना के कारण इनके काव्य में भाव–उदात्तता मिलती है। साकेत में मानवीय भावनाओं का बड़ा सुन्दर प्रकाशन है जिसके कारण उन्हें आधुनिक तुलसीदास माना जाता है। गुप्त मुख्यतः प्रबन्धकार थे। इनके काव्य में भावों की मार्मिक व्यंजना मिलती है। भावों की विविधता, उदात्तता और गहनता के कारण गुप्त आधुनिक युग के श्रेष्ठ महाकवि सिद्ध होते हैं।

2. **नारी भावना–** गुप्त के काव्य में उपेक्षित नारियों को अपने कुछ काव्यों में विशेष महत्त्व दिया है– जैसे 'साकेत' में उर्मिला, 'यशोधरा में यशोधरा' और 'विष्णुप्रिया' में विष्णुप्रिया आदि। उनकी रचना 'यशोधरा' की प्रसिद्ध पंक्तियां हैं–

"अबला जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में दूध और आंखों में पानी।"

इन्होंने नारी पात्राों के माध्यम से आदर्श भारतीय नारी का चित्राण किया है।

3. **गृहस्थ जीवन का चित्राण–** सांस्कृतिक कवि के रूप में गुप्त की एक और विशेषता भारतीय सम्मिलित परिवार और गृहस्थ जीवन का सुन्दर चित्राण किया है। परिवार में माता–पुत्रा, पिता–पुत्रा, भाई–भाई, पति–पत्नी आदि विभिन्न सम्बन्धों का आदर्श रूप इनकी रचनाओं की विशेषता है। इस चित्राण के माध्यम से कवि ने भारतीय संस्कृति के भव्य चित्रा प्रस्तुत किए हैं।

4. **प्रकृतिचित्राण–** गुप्त की रचनाओं में प्रकृति का सुन्दर वर्णन है 'पंचवटी' और 'सिद्धराज' में प्रकृति का मनोहारी चित्राण है। 'साकेत' में प्रकृति का मानवीकरण, उद्दीपन रूप में ऋतु वर्णन तथा प्राकृतिक उपादानों का सुन्दर प्रयास है। 'साकेत' में मानव तथा प्रकृति का स्वाभाविक सम्बन्ध मिलता है। यह प्रकृति प्रयोग परम्परागत और आधुनिक स्वच्छन्द प्रयोग का समन्वय है।

5. **स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति–** हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति में गुप्त का विशेष योगदान रहा है जिसका प्रमाण उनकी मुक्तक कविताएं हैं। उनकी कुछ कविताओं में रहस्यवादी भाव भी मिलते हैं। प्रकृति के माध्यम से परोक्ष सत्ता के प्रति रहस्यवादी भाव प्रकट करना कवि का प्रशंसनीय प्रयास है। इसका उदाहरण है – नक्षत्रा–निपात, अनुरोध और पुष्पाजंलि आदि कविताएं।

6. **श्रेष्ठ प्रबन्ध रचनाएं –** गुप्त आधुनिक काल के सर्वप्रमुख कवि हैं जिन्होंने आधुनिक प्रबन्ध काव्यों की परम्परा में विशेष योगदान दिया। 'रंग में भंग' उनका सुन्दर खंडकाव्य है। इन्होंने लगभग तीस श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य लिखे। उनमें प्रबन्धकार की अदभुत प्रतिमा थी। 'साकेत' को आधुनिक काल का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य कहा जाता है। इस रचना में मार्मिक प्रसंगों की सुन्दर उदभावना, कथा प्रसंगों का समुचित संयोजन, पात्राों का सफल चरित्रा–चित्राण, संवाद–कौशल, भाव–रसाभिव्यक्ति और उद्येश्य की महानता मिलती है।

7. **भाषा शैली –** गुप्त ने आधुनिक कविता में विविध नवीन प्रयोग किए। उन्होंने न केवल खड़ीबोली काव्य–भाषा को सशक्त बनाने में योगदान दिया अपितु आधुनिक कविता की विविध काव्य–शैलियों को भी विकसित किया। मुक्तक और प्रबन्ध दोनों काव्य–शैलियों में वे सफल रहें। उन्होंने श्रेष्ठ खंडकाव्य और 'साकेत' जैसे महाकाव्य की रचना की। अपने काव्य–संग्रहों में उच्च कोटि के गीतों की रचना की और 'यशोधरा' जैसा सुन्दर खंडकाव्य रचा। गीतिकाव्य में उनका उत्कर्ष पाया जाता है। गुप्त ने तुकांत, अतुंकात, भिन्नतुकांत, स्वच्छन्द प्रवाह, मात्रिाक छंद, वार्णिक छंद और मिश्रित छंद आदि शैलियों में क्षमता दिखाई। 'यशोधरा' चम्पू काव्य का सुन्दर उदाहरण है। खड़ीबोलीकाव्य की विविध शैलियों के सफल निर्माण में गुप्त का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। वे आधुनिक युग के ऐसे प्रतिनिधि कवि और राष्ट्रकवि है जिनका काव्य बीएवीं शती के युगबोध का परिचायक है। गुप्त हमारी राष्ट्रीय और सांस्कृतिक भावनाओं के प्रशंसक रहे हैं। इनके काव्य में हिन्दी कविता के भाषागत और भागवत उदय और विकास की समस्त मंजिलें अर्थात समस्त काव्य–प्रवृत्तियों पाई जाती हैं। इनके काव्य में भाषा की सरलता उन्हें जनकावे सिद्ध करती है और ये महाकवि माने जाते हैं।

गुप्त को खड़ीबोली कविता के जनक माना जाता है इन्होंने हिन्दी की प्रसिद्ध साहित्यक पत्रिाका 'सरस्वती' में खड़ीबोली कविता का आरंभ किया। इन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा खड़ी बोली कविता की भावी सफल संभावना का पूरा आभास दिया। इनके अनेक गीतों में छायावादी गीतिशैली की वैयक्तिकता, संगीतात्मकता, भाव–प्रवणता और कोमल–कांत पदावली आदि विशेषताएं मिलती हैं। छायावादी गीतिशैली का इन पर विशेष प्रभाव मिलता है। इन्होंने काव्य–भाषा का निर्माण करके ऐतिहासिक महत्त्व प्राप्त किया और उसके उतकर्ष में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

1.1.3 साकेत की कथावस्तु

'साकेत' गुप्त की प्रमुख रचना और उनका कीर्ति–स्तंभ है। हिन्दी साहित्य में जो महत्त्व तुलसी की 'रामचरित मानस' का है, वही खड़ीबोली हिन्दी–काव्य में साकेत को प्राप्त है। इसमें कवि की काव्य–शक्ति, कला–कौशल, जीवन–दर्शन, मानव जीवन, सांस्कृतिक चेनता और आदर्शवादिता– आदि अनेक विशेषताओं को देखा जा सकता है। यह रचना गुप्त के साहित्यिक जीवन की चरम सीमा है। यह उनकी श्रेष्ठतम और प्रतिनिधि कलाकृति है।

इस रचना की प्रेरणा गुप्त को द्विवेदी जी के लेख 'कवियों की उर्मिला–विषय उदासीनता' से प्राप्त हुई। साकेत की रचना सन् 1931 हुई। यह एक अन्यतम रामकाव्य है। इसकी कथावस्तु, पात्रा और विचार–स्त्राोत पौराणिक होते हुए भी नवीन तथा आकर्षक हैं। कवि ने पुरानी कथा को नहीं बदला पर पात्राों तथा उनके चरित्रा–चित्राण को अवश्य बदला है। इस रचना के पात्रा नवीनता और विश्वसनीयता लिए हुए हैं। कवि की दृष्टि लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला की दयनीय स्थिति पर है। इस रचना का मूलाधार मानस है पर प्रधान पात्रा उर्मिला है। इसकी राम कथा एक परिवार के परिवेश से और एक विशेष स्थान–साकेत से जुड़ी हुई है। इस रचना के विषय में गुप्त ने स्वयं लिखा है– "साकेत में मैंने कालिदास की प्रेरणा से, प्रेम की झलक देने की चेष्टा की है, जो भोग से आरंभ होकर वियोग झेलता हुआ, योग में परिणत हो जाता है।" यह बारह सर्गों का महाकाव्य है। इसका कथानक राम कथा पर आधारित है। इसमें राम–सीता के स्थान पर उर्मिला–लक्ष्मण की कहानी है। इस रचना का आरंभ–सरस्वती वन्दना से होता है जिसमें उर्मिला का परिचय दिया गया है। कवि ने उर्मिला की तुलना पृथ्वी पर खिले एक सुन्दर फूल से की है। कवि ने उर्मिला तथा लक्ष्मण के प्रेम पूर्ण दाम्पत्य जीवन का वर्णन किया है। द्वितीय सर्ग में अयोध्या के जीवन की घटनाओं का वर्णन है। इसकी प्रमुख घटना है– कैकेयी के चरित्रा का श्रद्धामय उत्थान। कवि ने कैकेयी की मनोस्थिति और उसके अन्तर्द्वन्द्व का वर्णन किया है। सर्ग के अन्त में राम के वनवास और दशरथ की मानसिक स्थिति का मार्मिक वर्णन है। तीसरे सर्ग में राम की धीरता, गंभीरता, सौम्यता और पितृ–भक्ति का चित्राण है। चौथे सर्ग में राम–वन–गमन के परिवेश में माता कौशल्या की दारुणिक कनोव्यथा, सुमित्राा को स्वाभिमान और उर्मिला के वियोग का बड़ा स्वाभाविक वर्णन है। सर्ग के अन्त में उर्मिला का मूर्छित होकर गिर जाना उसके उपेक्षित होने का प्रमाण है।

साकेत के पांचवे सर्ग में राम के वन गमन और चित्राकूट आगमन का उल्लेख है। इस सर्ग में साकेत की सीसा पर मातृभूमि की वन्दना करते हैं जिसमें कवि की राष्ट्रभक्ति दिखाई देती है। छठे सर्ग में विरहाकुल, वियोगिनी उर्मिला की मार्मिक स्थिति का वर्णन है। यहां उसका वियोग अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया है। वह प्रेम पर कत्तव्य को महत्त्व देती है और अपनी विषम स्थिति को महत्त्वहीन समझती है। इसी सर्ग में राजा दशरथ की मृत्यु हो जाती है। सातवें सर्ग में भरत और शत्राुघ्न अयोध्या लौट आते हैं। भरत अपनी माँ कैकेयी को बुरा–भला कहते हैं। इसमें भरत की आत्मग्लानि एवं भ्रातृ–प्रेम का वर्णन

है। इसी सर्ग में राम को वापस लौटा लाने का भरत निश्चय लेते करते हैं।

आठवें सर्ग में चित्राकूट की प्राकृतिक सुन्दरता, सीता के स्वावलम्बी स्वभाव तथा सात्विक गृहस्थ जीवन का वर्णन है। इसमें राम के आदर्श चरित्रा का गुणगान भी किया गया है। राम के चरित्रा के आदर्श हैं–त्याग, सुख–शान्ति स्थापना, दीनों की रक्षा, मानवता की स्थापना, देशभक्ति, राष्ट्रप्रेम, निस्वार्थ भावना और मानव–मात्रा की सेवा करना। इसी सर्ग में राम तथा भरत के मिलाप के दृश्य हैं। इसमें कैकयी के आत्म–संताप तथा राम द्वारा पित्–आज्ञा का दृढ़ पालन आदि की सुन्दर व्याख्या है। इसमें मर्यादित पारिवारिक स्नेह तथा शील–निरूपण के अदभुत चित्रा हैं। साकेत का नौंवा सर्ग सबसे महत्त्वपूर्ण है जिसमें उर्मिला के विरह का मार्मिक चित्राण है। कवि ने अपनी समस्त अर्जित करुणा, दया, ममता, प्रेम और वात्सल्य आदि भावों को बड़ी कुशलता से व्यक्त किया है। विरहणी उर्मिला की विषम वियोगावस्था का अति अनुरंजनकारी वर्णन है। उर्मिला की विरहदशा का अनुमान कवि ने इस प्रकार लगाया है।

"मानस मंदिर में सती, पति की प्रतिमा पाप,
जलती सी उस विरह में, बनी आरती आप।"

उर्मिला का विरह जीवन के बाहर की वस्तु नहीं है। उसका प्रतिफलन नित्य–प्रति के गृहस्थ जीवन में हुआ है। इस विरह में वह योगिनी नहीं बनती, वह राज्य–परिवार की वियोगिनी पतिव्रता स्त्राी है। दसवें सर्ग का आरंभ कृशकाय बनी अत्यन्त निर्बल स्त्राी उर्मिला का वियोग अपनी चरम अवस्था पर आ जाता है। इसमें उर्मिला अपनी माता से अलग होकर पति के घर आने पर हुई घटनाओं को याद करती हैं। कवि ने यह वर्णन उत्पन्न मार्मिक शब्दों में किया है। ग्यारहवें सर्ग में भरत के पतस्वीं रूप और साधुचरित्रा का अंकन बड़े मनोयोग से किया गया है। यहा कैकेयी का भी तपस्विनी रूप दिखाया गया है। इसमें हनुमान तथा भरत की भेंट तथा सीता हरण के बाद लक्ष्मण की मानसिक स्थिति का वर्णन है। बारहवें सर्ग में मांडवी भरत को प्रेरित करती है कि वह राम के पास वन में जाएं। इस सर्ग में राम की लंका पर चढ़ाई करने का भी वर्णन है। इस वर्णन में कवि की राष्ट्रभावना का उद्घाटन हुआ है। इस अंतिम सर्ग में राम–रावण युद्ध और रावण की पराजय का वर्णन है। इस कथा में लक्ष्मण को नायकत्व प्रदान करने के लिए मेघनाद वध को प्रधानता दी गई है। सर्ग के अन्त में लक्ष्मण और उर्मिला का मिलाप होता है और कथा की समाप्ति होती है।

साकेत का मूलाधार रामकथा है पर इसे हम शुद्ध राम कथा नहीं मान सकते। इसमें व्यक्त कवि की नवीन उद्भावनाओं ने इस रचना को पूर्णतः नवीन और आकर्षक बना दिया है। इसका कथानक राम गुणगान से हट कर उर्मिला–विरह–दर्शन बन जाता है। चित्राकूट सभा में कैकयी का अनुताप और पश्चापाप तथा उसका मानसिक अन्तर्द्वन्द्व कवि की नवीन उद्भावनाएं हैं जिससे कैकेयी के चरित्रा का उत्कर्ष प्रकाशित किया गया है। 'साकेत' नाम की सार्थकता भी कवि के उद्देश्य को स्पष्ट करती है। इससे गुप्त की परिष्कृत कला–कौशल के भी दर्शन होते हैं। अंतिम सर्ग में मांडवी के चरित्रा का भी उत्कर्ष दिखाया गया है। इसके अतिरिक्त हनुमान द्वारा भरत के लिए संजीवनी बूटी लाने, लक्ष्मण की मूर्च्छा आदि का सुन्दर वर्णन है। इसके साथ ही साकेत में भरत द्वारा रथ–सज्जा, परिवारिक हास–परिहास, आमोद–विलास, सीता का उज्ज्वल चरित्रा और कंभकरण की मूर्च्छा आदि नवीन उद्भावनाओं के साथ चित्रिात हुए हैं। यह एक सफल महाकाव्य है। गुप्त ने इस रचना में अपने युग की संचित भावनओं, मान्यताओं, रीति–रिवाजों और राष्ट्रीय उत्थान संबंधित विचारों को मूर्त रूप प्रदान किया। 'साकेत' में

उनकी परिपक्व कला, प्रौढ़ अभिव्यक्ति और परिष्कृत सिद्धि के साथ–साथ भावों तथा रसों की मनोरम छटा मिलती है। यह रचना कवि की कीर्ति–स्तंभ एवं हिन्दी साहित्य की अनूठी कलाकृति है।

गुप्त को जनकवि और राष्ट्रकवि माना जाता है। उनका साहित्य उदात्त, महान, मानव के उत्थान की ओर अग्रसर, देश तथा राष्ट्र की भावनाओं से पूर्ण है और अत्यन्त सरस, कलात्मक तथा भव–व्यंजक है।

भारतीय संस्कृति के प्रवक्ता होने के साथ गुप्त प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि है। इनकी सभी रचनाएं राष्ट्रप्रेम से परिपूर्ण हैं। उत्तर भारत में राष्ट्रीयता के प्रचार और प्रसार में 'भारतभारती' के योगदान का विशेष महत्त्व है। इनके काव्य में हिन्दी कविता के पिछले पचास–पचपन वर्षों का इतिहास सुरक्षित है। इनकी कविता में काव्यक्षेत्रा के सभी आन्दोलन प्रतिबिम्बित हैं।

अपने विपुल साहित्य, अदभुत प्रबन्ध कौशल, भाषा के निर्माण और विकास तथा जीवन को समग्रता से ग्रहण करने की क्षमता के कारण उत्तर भारत की तीन पीढ़ियों की युगचेतना को प्रभावित करने में इनका साहित्य पूरी तरह सफल रहा है। भारतीय संस्कृति के पोषक एवं प्रशंसक कवि गुप्त निस्संदेह महाकवि कहे जा सकते हैं। इनमे कालानुसरण की अदभुत क्षमता है और यही इनकी कला की विशेषता भी कही जा सकती है। इन्होंने युग की बदलती हुई भावनाओं और काव्य–प्रणालियों को ग्रहण करने में अपने अदभुत कौशल का परिचय दिया। इस दृष्टि से ये हिन्दी के प्रतिनिधि कवि ठहरते हैं। इनके साहित्य में स्वदेश प्रेम और राष्ट्रीय आन्दोलनों का स्वर मिलता है। एक ओर इनके काव्य में वर्णनात्मक शैली है और दूसरी ओर छायावादी शैली और रहस्यानुभूति है। आचार्य शुक्ल के शब्दों में – "गुप्त जी वास्तव में सामंजस्यवादी कवि हैं। प्रतिक्रिया का प्रदर्शन करने वाले अथवा मद में झूमने वाले कवि नहीं। सब प्रकार की उच्चता से प्रभावित होने वाला हृदय उन्हें प्राप्त है। प्राचीन के प्रति पूज्य भार तथा नवीन के प्रति उत्साह, दोनों इनमें हैं।" गुप्त जी की दृष्टि व्यापक, उदार और मानवतावादी रही है।

1.1.4 'साकेत' का महाकाव्यत्व :

'साकेत' कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त की सर्वश्रेष्ठ रचना है। इसकी रचना में गुप्त जी ने राम–भक्ति, काव्य के उपेक्षित पात्राों के प्रति सहानुभूति, व्यापक जीवन–दर्शन, आधुनिक युग के मूल्य, वैज्ञानिक ढंग की व्याख्या और दिव्य–चारित्रिाकता के धरातल पर अपनाए गए हैं। यह एक ऐसा काव्य है, जिसने गुप्त जी के कवि–व्यक्तित्व को अमरता प्रदान की है और इसी के प्रणयन के उपरांत साहित्य–जगत् गुप्त जी को महाकाव्यकार कहने लगा है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की दृष्टि में 'साकेत' महाकाव्य न होकर 'बड़ा प्रबन्ध काव्य' है। डॉ0 नगेन्द्र ने इसे 'जीवन–काव्य' की संज्ञा दी है। डॉ0 शम्भुनाथ सिंह साकेत को 'बृहत्प्रबन्धकाव्य' कहकर पुकारते हैं। इसके विपरीत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इसे 'महाकाव्य' नाम देते हैं। आनन्द दुलारे वाजपेयी ने तो इसे महाकाव्य ही नहीं, आधुनिक हिन्दी का युग–प्रवर्तक महाकाव्य माना है। डॉ0 कमलाकांत पाठक और डॉ0 उमाकांत गोयल, दोनों ने साकेत को 'महाकाव्य' कोटि में रखा है। विभिन्न विद्वानों द्वारा बताई गई महाकाव्य की कसौटियों के आधार पर हम साकेत का विश्लेषण करेंगे।

विषय की व्यापकता :– साकेत का विषय राम–कथा है और कवि की मान्यता है कि राम–कथा पर लेखनी उठाने वाला व्यक्ति सहज ही कवि बन जाता है :–

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,

कोई कवि बन जाय सहज सम्भाव्य है।

पुनः राम—कथा कर्त्तव्यों और सम्बन्धों की कहानी है, जो जीवन की व्यापकता और मानव—मूल्यों की समग्रता की द्योतक बन जाती है। भारतीय संस्कारों, मर्यादाओं और आदर्शों की अन्तरंगता राम—कथा के कण—कण में बसी है, अतः राम कथा से अधिक व्यापक विषय हो ही क्या सकता था, जिसे गुप्त जी अपनाते। कविवर मैथिलीशरण द्वारा की गई कथात्मक परिवर्तन वास्तव में विषय को और भी व्यापक बनाती है। साकेत का कवि अपने बारह अध्यायों में इतनी व्यापक योजना प्रस्तुत करता है, कि सहज ही राम—कथा जीवन के प्रत्येक पहलू का स्पर्श करने लगती है।

नायक की महत्ता एवं प्रतिनिधित्व :— साकेत नायिका—प्रधान काव्य है उर्मिला को वह स्थान इसमें प्राप्त है, जो नायक को होता है। नायिका का पति होने के नाते नायक—पद लक्ष्मण को दिया जाना चाहिए, किन्तु 'साकेत' में लक्ष्मण की भूमिका नायक की नहीं है। राम भी काव्य के नायक नहीं बन सके हैं। कथा का समूचा प्रसार अयोध्या की सीमाओं में हुआ है, भरत एक—मात्रा ऐसा पात्रा है, जो अयोध्या की देख—रेख करता एवं शासन का कार्य—भार सम्भालता है। 'साकेत' का शासन राम के प्रतिनिधि के रूप में भरत के हाथ में है, इसलिए भरत को भी नायक कहा जा सकता है। किन्तु वह भी सत्य से दूर की बात होगी। क्योंकि भरत को कथा का फल प्राप्त नहीं होता, इसलिए उसे भी नायक नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार सिद्ध है कि 'साकेत' का नायकत्व निश्चित नहीं, केवल नायिका—पद ही निश्चित किया जा सकता है।

नायिका का महत्व उसके त्याग, तप, बलिदान, परिवार के उत्थान एवं समूची कथा का केन्द्र—बिन्दु होने के कारण उर्मिला में निहित है। उर्मिला साकेत के तत्कालीन भाग्य का प्रतिनिधित्व करती है। समस्त पात्रों की दृष्टि उर्मिला पर रहती है—लक्ष्मण की तो वह पत्नी है और लक्ष्मण के आदर्शों के लिए उसे बलि चढ़ा दिया जाता है; राम को उसके साथ सहानुभूति है; सीता को दुःख है कि जो भाग्य उसे मिला, वैसा भी उर्मिला को न मिल सका; कौशल्या—सुमित्राा को विरहिणी बाला के लम्बे चौदह वर्षों का बोझ सालता है; तो, माण्डवी—श्रुतिकीर्ति को बहन की विवशता और मर्यादा पर अश्रुपात करने के सिवा कुछ नहीं सूझता। अतः उर्मिला साकेत के समूचेपन पर इस प्रकार रम रही है कि उसके प्रतिनिधित्व के सिवा काव्य में कुछ उभरता ही नहीं। इस दृष्टि से साकेत का महाकाव्यत्व स्वयं सिद्ध हो जाता है।

चरित्रा—चित्राण :— कवि ने सभी प्रमुख पात्रों के चरित्रा बड़े मनोयोग से गढ़े हैं। कवि ने उर्मिला, कैकेयी, लक्ष्मण और भरत के चरित्रों का विकास बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। प्रत्येक पात्रा की भूमिका सार्थक, सक्रिय और कथा—विकास में सहयोगी दीख पड़ती है। महाकाव्य की दृष्टि से 'साकेत' में आए चरित्रों का चित्राण बड़ा सक्षम और सानुकूल है।

रसाभिव्यक्ति वस्तु—वर्णन :— महाकाव्य के नाते 'साकेत' में कवि ने प्रकृति के विभिन्न रूपों, युग जीवन के सम्पूर्ण चित्रों, भावोद्रेक, रसाभिव्यक्ति, इतिवृत्तात्मकता आदि अंगों का विशेष आश्रय लिया है। समूचा कथानक अयोध्या की सीमाओं में घटित होते या सूचित किया

जाता दिखाया गया है। ऐसा करने से कथानक में स्थानैक्य के साथ–साथ काल–सापेक्षता एवं कार्य–प्रणालियों का सुयोग्य विकास देखने में आया है। वस्तु–वर्णन का यह बड़ा महत्वपूर्ण पहलू है, जिसे साकेतकार ने बड़े मनोयोग से अपनाया और राम–कथा को अयोध्या में ही केन्द्रित रखते हुए काव्य के कथ्य को सम्पन्न किया है।

मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि :– कवि मैथिलीशरण गुप्त मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि करने में बड़े सिद्ध–हस्त हैं। चित्राकूट में अयोध्या का समूचा समाज पहुंचा है, वहां कैकेयी प्रायश्चित करते हुए कहती है–'युग–युग तक चलती रहे यह कठोर कहानी, रघुकुल में थी एक अभागी रानी' आदि तभी उसे प्रायश्चित और पश्चाताप का उसी समय प्रतिकार आता है; राम की ओर से – 'सौ बार धन्य वह एक लाल की माई, जिसने जना भरत–सा भाई'। प्रसंग का यह आदान–प्रदान, प्रायश्चित–पश्चाताप और क्षमादान, ये सब मिलकर उक्त प्रसंग एक अतीव मार्मिक अध्याय प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार बनवास की सूचना, राम–लक्ष्मण–सीता का वन–गमन, उर्मिला का विरहिणी रूप आदि बड़े मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि साकेत में हुई है। गुप्त जी को दिया जाने वाला श्रेय ही उनकी रचना के महाकाव्यत्व को स्थापित करता है।

रसात्मकता :– 'साकेत' करुणा केन्द्रित महाकाव्य है। हमारे महाकाव्यों के प्राचीन लक्षणों में रस की दृष्टि से शृंगार, वीर, करुण (शांत) में से किसी एक रस को अंगी रस मानने का आग्रह है। साकेत करण–रस प्रधान रचना है, इसलिए लक्षणानुकूल साकेत महाकाव्य ठहरता है।

चिरन्तन सत्य :– साकेतकार ने रचना के प्रवाह में बीसियों चिरन्तन सत्यों का उद्घाटन किया है। सार्वभौम मनोभावों का समुचित उल्लेख साकेत की उपलब्धि है। नारी–जीवन के स्थाई और शाश्वत सत्यों के अनेक चित्रा उर्मिला के चरित्रा में उभारे गए हैं। पति के पथ का विघ्न न बनने का संकल्प और विवश जल विहीन भी न की तरह व्यथित होने वाले भावों को वाणी देता हुआ कवि वास्तव में चिरन्तन सत्य को ही उद्घाटित कर रहा है। दूसरी ओर विरहिणी उर्मिला के ह्रदय में उठने वाले हजारों अरमान उद्गार और फिर उनकी प्रतिक्रियाएं –कवि ने इस मार्मिक स्थिति की पहचान और इसे सही आकार दिया है।

सांस्कृतिक चेतना :– भारतीय महाकाव्य का वास्तविक रूप तभी उभरता स्वीकार किया जाता है, जब उसमें भारतीय संस्कारों और मानव के शाश्वत मूल्यों की स्थापना की गई हो। 'साकेत' इस दृष्टि से भी महाकाव्य ही ठहरता है, क्योंकि उसकी समूची योजना ही सांस्कृतिक चेतना पर आधृत है। भक्ति, दर्शन तथा संस्कारों को राम–कथा के माध्यम से न केवल उजागर किया गया है, बल्कि पाठकों के लिए प्रेरक बना दिया गया है। कवि ने 'साकेत' में राष्ट्रीय भावनाओं, युग धर्म और जातीय आदर्शों का समन्वय किया है।

उदात्त भाषा शैली :– मैथिली शरण गुप्त ने राम–कथा के महान विषय के उदात्त भावों को सरलतम भाषा में प्रस्तुत करते हुए प्रबन्धात्मक शैली का दामन थामा है। प्रबन्धात्मक शैली के अन्तर्गत ही कवि ने उदात्त लक्ष्यों और आदर्श संकल्पों को अपनाकर इसे महाकाव्यत्व प्रदान किया है। रचना की रमणीयता एवं अभिव्यंजना कौशल इसी उदात्त भाषा शैली का एक भाग है; तभी तो उसमें बिना अलंकारों के ही भाषा–सुसज्जा तथा अभिव्यक्ति सौंदर्य का स्थिर आभास प्राप्त है।

सर्ग—रचना तथा छन्दोबद्धता :— महाकाव्य सम्बन्धी शास्त्रा के इस नियम के प्रति स ा क ` त क ा र अधिक जागरूक रहा है। उसकी कृति बारह सर्गों में विभाजित है, प्रत्येक सर्ग (नांवां छोड़कर) लगभग एक ही छंद में रचा गया है और सर्ग के अन्त में छन्द—परिवर्तन की सूचना भी दी गई है नवें सर्ग में विभिन्न छन्दों और गीतों और पदों का समन्वय करके कवि ने ऐसा प्रयोग किया है, जिससे मुक्तक छन्द योजनाओं को भी महाकाव्य का अंग बनाया जा सका है। साकेतकार ने भले ही नये दौर में छन्दोबद्धता को मात्रा प्रवाह प्राप्त करने के लिए ही अपनाया है, तथापि इसमें काव्य में भावनाओं में उद्वेलित होने का प्रमाण सहज ही उपलब्ध होता है। 'साकेत' का महाकाव्यत्व इससे प्रमाणित है।

महान उद्देश्य :— महाकाव्य के लक्षणों में महान 'उद्देश्य' एक अतीव मूल्यवान अंग है। साकेतकार ने इसका सुयोग्य प्रणयन किया है। काव्य की उपेक्षिता नायिका उर्मिला को आलौकिक करना, राम—कथा—सा महान कथन करना, निन्दनीय चरित्रों की जीवंतता प्रदान करना और समूची राम—कथा को अयोध्या की सीमाओं में समेटने को उर्वर कल्पना, निश्चय ही कवि का महान उद्देश्य सिद्ध करते हैं।

डॉ0 गोबिन्द राम शर्मा ने 'साकेत' के महत्त्व और महाकाव्यत्व—स्थापना को इंगित करते हुए कहा था—''महाकाव्य एक ऐसी छन्दोबद्ध प्रकथात्मक रचना होती है, जिसमें विषय की व्यापकता और नायक की महानता के साथ—साथ कथा—वस्तु की एक सूत्राता, छलकता हुआ रस—प्रवाह वर्णन विशदता, उदात भाषा शैली, जीवन का यथा—साध्य सर्वांगीण चित्राण और जातीय भावनाओं तथा संस्कृति की सुन्दर अभिव्यकित हो'' और साकेत में उपर्युक्त सभी गुण मौजूद हैं। अतः उसे 'महाकाव्य' कहने में किसी को किसी भी प्रकार की आपत्ति नहीं रह जाएगी।

1.1.5 साकेत का अभिव्यंजना कौशल और विरह

साकेत—कथा में उर्मिला—लक्ष्मण का हास—विलास प्रसंग, कैकेयी—मंथरा संवाद, राम—सुमित्राा—संवाद प्रसंग, राम द्वारा अयोध्या से निकलना, भरत का अयोध्या आगमन और आत्म—ग्लानि एवं कैकेयी की भर्त्सना, चित्राकूट में सीता की गृहस्थी, चित्राकूट की सभा में लक्ष्मण—उर्मिला मिलन, उर्मिला का विरह—वर्णन आदि प्रत्येक रमणीय स्थल बन पड़े हैं। इन सभी प्रसंगों में कवि का अभिव्यंजना—कौशल उच्च स्तर का तथा मर्मभेदी है। साकेत का कोई भी पाठक इन प्रसंगों में तल्लीन होकर रह जाता है। काव्य में सूक्ष्म अनुभूतियों की मार्मिक अभिव्यक्ति के नाते गुप्त जी के महाकाव्य 'साकेत' का नवम् सर्ग अद्वितीय है। इस सर्ग का कथ्य जहां उर्मिला के मनोभावों, मनोविकारों एवं मनोव्यथाओं को अभिव्यक्ति—जल से धोकर निर्मल करने को लक्ष्य करता है, वहीं कवि के शिल्प में गीत, पद, प्रकरण, छंद और शोक—ध्वनि का समावेश भी स्पष्ट होता है। विरह—चित्राण की पारम्परिक और शास्त्राीय परिपाटियों के अनुसार कवि ने प्रवास—विरह की दसों दशाओं, षट्—ऋतु एवं बारह—मासा चित्राण तथा करुण—रस परिपाक, सभी स्थितियों का बड़ा निर्मम वर्णन किया है। यही कारण है कि हम विशेष तौर पर नवम् सर्ग और आमतौर पर 'साकेत'

के सभी सर्गों के अभिव्यंजना—कौशल की चर्चा करते हुए मुख्यतः विरह वर्णन की सविस्तार चर्चा करेंगे।

साकेतकार के नवम् सर्ग की रचना एक विशेष मनोयोग से की है। अपनी समूची कलात्मकता और साधना का सार इसी सर्ग में दिग्दर्शित करवाया है। विरहणी के विभिन्न भावों को अभिव्यंजित करने के लिए कवि ने गीत योजना, चित्रा—योजना, वर्ण—योजना, नाद—योजना, स्वर और व्यंजन—मैत्राी, शब्द—शक्तियां, गुणों, मुहावरों, लोकोक्तियाों, अप्रस्तुत—योजना, रूप—साभ्य, धर्म—साभ्य, प्रभाव—साभ्य, मानवीकरण, रस—योजना आदि कलात्मक शिल्पों का आश्रय लिया है। स्पष्टीकरण के लिए हम यहां इनमें से कतिपय शिल्प—माध्यमों की सोदाहरण व्याख्या भी करेंगे।

1. गीत—योजना : महाकाव्यों में गीतों को कोई स्थान नहीं होत, किन्तु विरह सरीखे अत्यन्त मार्मिक भाव को गीति—शैली में प्रस्तुत करने का लोभ कवि संवरण नहीं कर पा रहा। उर्मिला की आंखों में नींद नहीं बार—बार निद्रा देवी को पुकारती है, खेलने के साधन प्रस्तुत करने को भी करती है, किन्तु विरहिणी से रूठी निद्रा! गुप्त जी इसे गीत में पेश करते हैंः—

आ—आ, मेरी निंदिया गूंगी!

आ, मैं सिर आंखों पर लेकर चन्द खिलौना दूंगी!

2. चित्र—योजना : कवि अपनी बात चित्राात्मक शैली में कहता है। नवम् सर्ग में कल्पनाधरित अनेक स्थितियों के शब्द—चित्र बनाना चाहती है, और चित्र की कल्पना सचमुच चित्रा ही उभार देती हैः—

नाला पड़ा पथ में, किनारे जेठ—जीजी खड़े,

अम्बु अवगाह आर्य पुत्रा ले रहे हैं थाह?

गुप्त जी ने अनेकथा गत्यात्मक चित्रा भी खींचे हैं। द्वादश सर्ग में जहां रण—भेरी—प्रसंग है, वहां का एक चित्रा देखें :—

प्रिया—कंठ से छूट सुमट—कर शास्त्रों पर थे,

त्रास्त—वधू—जन—हस्त स्त्रास्त—से वस्त्रों पर थे।

3. वर्ण योजना : कवि रंगों को बहुत पसन्द करता है। अपने काव्य में गुप्त जी ने प्रत्येक शब्द—चित्र को रंगीन बनाने का भी भरसक प्रयास किया है :—

काली—काली कोइल बोली—होली, होली, होली।

हंसकर लाल—लाल होठों पर हरयाली हिल डोली,

फूटा यौवन, फाड़ प्रकृति की पीली—पीली चोली।

4. नाद–योजना : ध्वनि द्वारा काव्य में संगीतमयता लाने के लिए ऐसा शब्द चयन जो ध्वनि का पर्याय हो, नाद योजना कहलाता है। कवि की अभिव्यंजना में इसे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है :–

सखि, निरख नदी की धारा,
ढलमल ढलमल चंचल अंचल झलमल झलमल तारा।
उछल उछल कर छल छल करके
थल थल तरके, कल कल धरके! बिखराता है पारा।

भाषा और गुण : कवि ने खड़ी बोली को काव्य में प्रतिष्ठत किया था। गुप्त जी वास्तव में खड़ी बोली–काव्य के प्रणेता भी कहे जा सकते हैं। ऐसा नहीं कि इनसे पूर्व कविता में खड़ी बोली को सजा–संवार कर कविता की अभिव्यक्ति का एक सम्मानित माध्यम बनाने का श्रेय प्राप्त है। 'साकेत' की रचना महाकाव्य में खड़ी बोली–प्रयोग की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। अतः कहना न होगा कि 'साकेत' खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य है।

भाषा–गुणों की दृष्टि से नवम् सर्ग में प्रसाद और माधुर्य दोनों देखे जा सकते हैं। शृंगारिक, शांत एवं करुण चित्राण माधुर्य गुणात्मक भाषा में अनुकूल छवि ग्रहण करते हैं। उर्मिला द्वारा खंजनों को देखकर अपने प्रिय नेत्राों की याद माधुर्य–प्रधान भाषा का नमूना हैः–

निरख सखी ये खंजन आए,
फेरे उन मेरे रंजन ने नयन इधर मन आए।

गुप्त जी प्रायः प्रसाद–गुण भाष का प्रयोग अधिक करते हैं, उनकी कविता में अर्थ प्रतीति सहज हो जाती है। प्रसाद गुण देखिए :–

या तो पेड़ उखाड़ेगा, या पत्ता न हिलायगया,
बिना धूल उड़ाये हा, ऊष्मानिल न जायेगा।

मुहावरे–लोकोक्तियां : कविवर गुप्त जी ने अपनी रचना में आम तौर पर नवम् सर्ग में खास तौर पर मुहावरों–लोकोक्तियों का खुलकर प्रयोग किया है। यों भी गुप्त जी को खड़ी बोली मुहावरों से बहुत लगाव है, उनके समस्त काव्य इस दिशा में मुहावरेदार भाषा की देन है। नवम् सर्ग में मुहावरों का रूप देखें :–

1. विलाप ही था बस का बनी का।
2. बिना प्रयोक्ता के हुए, यहाँ भोग भी रोग।
3. आँखों का नीर ही क्या कम फिर मुझको?
4. खड़ा खोल दरियों के द्वार, ओ गौरव गिरि, उच्च–उदार।
5. जीवन के पहले प्रभात में आँख खुली जब मेरी।

6. आगे जीवन—संध्या है देखें क्या हो आली।
7. सिर आँख पर क्यों न कुमुदिनी लेगी वह पदलाली।
8. लिखकर लीहित लेख, डूब गया है दिन अहा।
9. कहता है पतंग मन मारे।
10. दीपक के जलने में आली, फिर भी है जीवन की लाली।
11. प्रिय के आने पर आवेगी, अर्द्ध चन्द्र ही तो पावेगी।
12. पलक पाँवड़ों पर पद रख तू।
13. आया अपने द्वार तप, तू दे रही किवाड़।
14. देख आप ही अरुण हुए हैं उनके पाण्डु कपोल।
15. दिन बारह वर्षों में, घूड़े के भी सुने गए हैं फिरते।
16. तिल—तिल काट रही थी दृग—जल—धार।

गुप्त जी ने भावों की अभिव्यंजन सर्वोत्तम की है। दम्पत्ति के प्रेम को संकेतों अैर प्रतिकों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए कवि ऐसे कौशल को प्रकटाता है कि पाठक सिर चालन किए बिना नहीं रह पाते। उर्मिला लक्ष्मण के दाम्पत्य—प्रेम का एक चित्रा दृष्टव्य हैं :—

करने लगी मैं अनुकरण स्वनूपुरों से,
चंचला थी चमकी, धनाली घहराई थी,
चौंक देखा मैंने, चुप कोने में खड़े थे प्रिय,
भाई! मुख लज्जा उसी छाती में छिपाई थी।

अलंकार योजना : नवम् सर्ग अप्रस्तुत विधान की दृष्टि से भी बड़ा सम्पन्न है। सादृश्यता, आरोप, सम्भावना, भ्रम, आभास आदि तत्त्वों को लेकर कवि ने अपने कथ्यों को सजाया है।

रूपक — अवधि—शिला का उर पर था गुरु भार,
तिल—तिल काट रही थी दृग—जल—धार।

भ्रम — नाम का मोती अधर की कांति से,
बीज दाड़िम का समझ कर भ्रांति से।

अपहुति — पहले आंखों में थे, मानस में कूद मग्न प्रिय अब थे,
छींटे वहीं उड़े थे, बड़े—बड़े अश्रु वे कब थे!

पुनरुक्तवराभास समय जा रहा और काल है आ रहा,

श्लेष — मेरी विभूति है जो, उसको भवभूति क्यों कहे कोई!

कवि ने निर्जीव पदार्थों, अमूर्त भावनाओं, प्राकृतिक उपकरणों पर मानवीय आरोप करके मानवीकरण के प्रयोग भी किए हैं।

1.1.5.1 स्वयं जांच अभ्यास

1. साकेत के रचनाकार कौन हैं? साकेत की रचना कब हुई।

....

....

....

1.1.6 सारांश

मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी काल के प्रतिनिधि कवियों में विशेष स्थान रखते हैं। इन्हें राष्ट्र कवि होने का सम्मान प्राप्त है। गुप्त जी ने अपने काव्य में समाज की सभी बुराईयों, नैतिक पतन तथा धार्मिक आडम्बरों को चित्रित करते हुए समाज को जाग्रत करने में विशेष भूमिका अदा की है। इनकी रचनाओं में भारत–भारती, साकेत विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं।

1.1.7 प्रश्नावली :

1. राष्ट्रीय काव्यधारा में गुप्त जी के स्थान का निर्धारण कीजिए।
2. साकेत के काव्य सौष्ठव पर विचार करें।
3. गुप्त काव्य की युगानुकूलता पर विचार करें।
4. गुप्त की नारी चेतना पर विचार करें।

1.1.8 सहायक पुस्तकें :

1. साकेत : एक अध्ययन – डॉ0 नगेन्द्र
2. मैथिलीशरण गुप्त – व्यक्ति और अभिव्यक्ति – डॉ. सी.एल. प्रभात
3. बीसवीं सदी का हिन्दी साहित्य – विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

पाठ संख्या : **1.2** लेखिका : डॉ. हरिसिमरन कौर

जयशंकर प्रसाद
(सन् 1890 से 1937 तक)

इकाई की रूपरेखा

1.2.0 उद्देश्य
1.2.1 प्रस्तावना
1.2.2 काव्यगत विशेषताएं
1.2.3 छायावाद के संदर्भ में कामायनी का मूल्यांकन
  1.2.3.1 प्रकृति के विविध रूप
  1.2.3.2 कामायनी का अंगी रस
1.2.4 कामायनी का काव्य सौष्ठव एवं काव्य शैली
  1.2.4.1 स्वयं जांच अभ्यास
1.2.5 सारांश
1.2.6 प्रश्नावली
1.2.7 सहायक पुस्तकें

1.2.0 उद्देश्य :

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप कामायनीकार जयशंकर प्रसाद की उन सभी साहित्यिक विशेषताओं को समझने में सक्षम हो पाएंगे जो उन्हें एक महान् कवि के पद पर आसीन करती हैं।

1.2.1 प्रस्तावना :

प्रसाद छायावादी काव्य के प्रवर्तक और आधुनिक कविता के सर्वोपरि कवि माने जाते हैं। इनकी प्रसिद्ध रचना 'कामायनी' हिन्दी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य माना जाता है। प्रसाद प्रेम और सौन्दर्य के कवि हैं। उनका कवि–व्यक्तित्व आत्मचेतना के गौरव से मंडित है। इनकी रचनाओं में छायावादी काव्य की सभी विशेषताएं मिलती है। प्रसाद का सौन्दर्यबोध अत्यन्त गहन और सूक्ष्म है। प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रति असीम अनुराग और श्रद्धा स्पष्ट दिखायी देती हैं। प्राचीन के प्रति गहरी आस्था होते हुए भी प्रसाद रूढ़िवादी नहीं थे। नवीन के प्रति जिज्ञासा और प्रशंसा का भाव रखने वाले प्रसाद ने दर्शन, पुराण एवं इतिहास का भी गहन अध्ययन किया। वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे और उनका कृतित्व भी बहुआयामी और विविधोन्मुखी है।

1.2.2 काव्यगत विशेषताएं :

प्रसाद ने अपनी कोमल अनुभूति की मौलिक अभिव्यक्ति साहित्य की लगभग सभी विधाओं में की है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में प्रसाद एक कवि, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार एव्र गीतकार के रूप में जाने जाते है। काव्य–क्षेत्रा में 'कामायनी' इनका अद्वितीय प्रबन्ध काव्य है। यह रचना मनुष्य जाति के मौलिक, मानसिक और अन्तः विकास की गाथा है जो अपने भीतर महान दार्शनिक सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक संदर्भ संजोए हुए हैं। इनकी काव्य रचना 'आंसू' उदात्त मानवीय प्रेम और विरह की मार्मिक अभिव्यक्ति है। 'लहर' में प्रसाद की रागात्मक संवेदनाओं का सुन्दर चित्राण है और 'झरना' सुन्दर कृति है। 'महाराणा का महत्व' ओर 'प्रेमपार्थिक' लघु आरव्यान काव्य हैं। इसी तरह 'चित्राधार', 'करूणालय' और 'काननकुसुम' भी अदभुत कृतियां है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में प्रसाद महान कवि–विचारक और अनुपम साहित्यकार के रूप में जाने जाते है। प्रसाद के काव्य का अध्ययन करते हुए इनकी काव्यगत विशेष्ताओं से परिचित होना आवश्यक है। प्रसाद छायावाद के प्रमुख कवि है और इसी आधार पर इनकी रचनाओं का मूल्यांकन किया जा सकता है।

प्रसाद की काव्यगत विशेषताएं – छायावाद एक युग प्रवृति है इसलिए इसका अपना एक युगबोध है। इस काव्य की अन्तर्वस्तु समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित है और इस युग के कवि की अन्तदृष्टि से प्रेरित है। ये कवि नवजागरण के दूत बन कर साहित्य जगत में आए। इसलिए छायावादी काव्य को 'शक्ति काव्य' कहा जाता है। इस कविता को विराट मानवीय चेतना की भावभूमि पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय प्रसाद को जाता है। इनकी काव्यगत विशेषताएं इस प्रकार है–

1. **दार्शनिकता –** प्रसाद का काव्य उनके गहन अध्ययन, गंभीर चिन्तन–मनन और प्रौढ़ जीवन अनुभव की चरम परिणति है। उसमें भारतीय परम्परा के अति प्रसिद्ध शैव दर्शन का प्रभाव स्पष्ट होता हैं। ब्रहमांड में शिव परमतत्व है। शिव की सता 'पराशक्ति' कहलाती है जिससे पांच शक्तियां उत्पन्न होती है – चित, आनन्द, इच्छा, क्रिया और ज्ञान। प्रसाद की रचना 'कामायनी' में इसका उल्लेख मिलता है। आनन्द तत्व इस रचना का केन्द्रबिन्दु है।
2. **आनंदवाद –** प्रसाद के काव्य का मूल प्रतिपाद्य है–आनंदवाद। विभिन्न विषमताओं के कारण मनुष्य का जीवन द्वन्द्व, अभाव, अतृप्ति एवं संत्रास से पूर्ण है। यह विषमता मानव–मानव में, ज्ञान और कर्म में, हृदय तथा बुद्धि में सर्वत्रा व्याप्त है। मनुष्य का स्वार्थ, लालच और अहंकार उसे व्यथित करती है। वह शांति प्राप्त नहीं करपाता। इस विडम्बना से मुक्ति का एक ही उपाय है–ज्ञान और कर्म का समन्वय, अपने और दूसरे के सुख का प्रयास तथा सुन्दर तथा शिव का समन्वय। मानव–मानव का यही ऐक्य आनन्द प्राप्ति का एक मात्रा उपाय है।
3. **समरसता –** जीवन के सही आनन्द की प्राप्ति का सबसे बड़ा साधन है–समरसता। समरसता का अभिप्राय है विभिन्न तत्वों में संतुलित सामंजस्य। सुख दुख में समरसता जीवन को संतुलित बनाती है। प्रसाद ने 'कामायनी' में इसी समरसता का संदेश दिया है। यही आनन्द का मार्ग है। विरोधी वृत्तियों का समन्वय और विपरीति तत्वों का संतुलित सामरस्य ही जीवन को स्वस्थ सुखी बना सकता है।
4. **सांस्कृतिक चेतना – सांस्कृतिक चेतना से अभिप्राय है –** मानवीय जीवन मूल्यों को उदात्तता प्रदान करने वाली प्रवृतियां। प्रसाद भारतीय संस्कृति के महान गुणों के प्रशंसक रहे हैं। इनकी कविता में मानव–मर्यादाएं और मान्यताएं सर्वत्रा विद्यमान है। इसमें आशा एवं आस्था, कर्म और भोग का समन्वय, दुख–सुख से तटस्थता, सर्वमंगल की कामना और नैतिकता का महत्व प्रकाशित किया गया है। आज मनुष्य उदात्त नैतिक मूल्यों में निहित सांस्कृतिक चेतना को भूल कर भौतिक सुख–स्वार्थ का दास बन रहा है जिससे वर्ग–भेद बढ़ रहा है। आपसी भाईचारे की जगह ईर्ष्या–वैर बढ़ रहा है और सर्वमंगल का भाव लुप्त हो रहा है। प्रसाद अपने काव्य में

भारतीय संस्कृति के 'वसुधैव कुटुम्बकम' के सिद्धान्त को प्रस्तुत करने का प्रयास करते है। वह जीवन को नाशवान समझ कर उससे विमुख होना उचित नहीं मानते बल्कि जीवन की निराशाओं के कारण को जान कर पुरानी भूलों को भुलाकर नव संसृष्टि में विश्वास रखते हैं। जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण प्रगतिवादी है। वह सांस्कृतिक आदर्शों के पक्षपाती होने पर भी पुरानी जर्जर परम्पराओं को त्याग कर युगानुकूल नवीन संकल्पों के साथ आगे बढ़ने की प्रेरणा देते है।

5. **व्यक्ति स्वातंत्रय का स्वर –** छायावादी कवि होने के नाते प्रसाद के काव्य में व्यष्टि तथा समष्टि और मानव तथा समाज का अपूर्व समन्वय मिलता है। उन्होंने अपनी कविता में व्यष्टि स्वातंत्रय को प्रेरित करते हुए विश्वबोध में उसका विलयन करने का प्रयास किया। प्रत्येक देशवासी में स्वतंत्राता की भावना, आत्माभिव्यक्ति की स्वतंत्राता और वैयक्तिगत स्वाधीनता प्रसाद के काव्य के जीवन्त तत्व है। उन्होंने अपनी रचना 'आंसू' में इस प्रकार के वैयक्तिक विरह को विश्व वेदना में परिणत करने की कामना की है।

6. **रूढ़ियों से मुक्ति का प्रयास –** छायावादी कवियों ने चली आ रही पौराणिकता का विरोध करके नवीन विषयों का चयन किया इसलिए इसे विद्रोह का काव्य भी कहा जाता है। प्रसाद के काव्य में उनका मौलिक चिंतन मिलता है और नवीनता के प्रति आग्रह है। इन्होंने किसी वाद या धारा को नहीं अपनाया और नवीन विषयों का प्रवर्तन किया।

7. **प्रकृति वर्णन –** प्रसाद के काव्य में प्रकृति का मनोहारी वर्णन है जो इनके देश–प्रेम और व्यक्ति स्वातंत्रय की आकांक्षा का पूरक प्रतीत होता है। इन्होने प्रकृति को सर्वसुन्दरी माना और उससे काव्य रचना की प्रेरणा प्राप्त की। प्रसाद ने प्रकृति को एक महान विलक्षण ईश्वरीय देन कहा। इनकी कविता में प्रकृति का सहचरी रूप मिलता है जिसमें पर्वतीय वातावरण, सागर, सरिता और निर्भर आदि के मनोहारी दृश्य मिलते हैं। प्रसाद ने हिमालय के सौन्दर्य के सुन्दर चित्रों का वर्णन किया है और प्रकृति के छोटे से छोटे तत्व पर भी दृष्टि डालकर उसे परिपूर्णता से चित्रित किया। प्रसाद ने प्रकृति को प्रेम, सौन्दर्य, रहस्य आनंद, अध्यात्म एवं एकांतप्रियता का हेतु माना और उससे समत्वभाव स्थपित किया। प्रकृति प्रसाद के काव्य–सौन्दर्य की आधारभूमि है।

8. **गीतात्मक मधुरता –** प्रसाद की कविता 'आंतरिक स्पर्श से पुलकित भावों' की कविता है। यह संसार जन्म–मरण, सुख–दुख, विरह–मिलन तथा ऊंच–नीच की सीमाओं के बीच अपनी यात्राा तय करता है। प्रसाद ने इस संसार की सच्चाई को समझते हुए अपनी रचनाओं द्वारा हृदय की अमर अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। प्रसाद के गीतों में विरह की कसक और मिलन का संदेश है। ये गीत आधुनिक साहित्य में भावानुभूति की गहराई और जीवन–दर्शन की गहराई की अदभुत मिसाल हैं।

9. **नारी विषयक धारणा –** प्रसाद नारी के प्रति नवीन मानवीय धारणा रखते हैं और उसे सौन्दर्य की अधिष्ठात्राी और मानवीय करूणा की विधात्राी मानते हुए जीवन के समस्त शुभ संकेतों की निर्मात्री मानते हैं। उनके अनुसार नारी श्रद्धा की प्रतिरूप है। वह नारी को दया, ममता, माया, मधुरिमा और अगाध विश्वास जैसे महान भावों की प्रतीक मानते है। उनकी दृष्टि में नारी विलास की सहचरी और उच्चतम भूमियों तक ले जाने वाली शक्ति है।

10. **कल्पना का प्रयोग –** प्रसाद के काव्य का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष है – अनुभूति और कल्पना का प्रयोग। इनका कल्पना–विधान अत्यन्त विलक्षण है। उनकी कल्पना सुदूरगामी है और वे प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में विराट और सूक्ष्म बिम्ब प्रस्तुत करते है। सुकुमार सौन्दर्य वर्णन में उन्हें अदभुत क्षमता

प्राप्त है उनके काव्य में बिम्ब, कल्पना, गूढ़ार्थ व्यंजना तथा रूपक रचना अति सुन्दर रूप में आई है। प्रसाद ने उज्जवल मानवता का सपना देखा और 'कामायनी' में पहली बार विचार किया कि जीवन का लक्ष्य क्या है, दुखों का कारण क्या है और मनुष्य अपनी बुद्धि द्वारा मानव–कल्याण के लिए क्या कर सकता है। प्रसाद इस प्रश्न पर विचार करने वाले महान विचारक हैं। वेदान्त, शैवदर्शन, बौद्धमत, गांधी तथा अरविन्द के विचारों को आत्मसात करके समकालीन समाज दर्शन के आधार पर एक जीवन दर्शन का प्रतिपादन किया जो इस भौतिकवादी युग में मानवमुक्ति का साधन सिद्ध हो सकता है।

11. **भाषा** – प्रसाद ने अपनी कविता में शुद्ध खड़ी बोली का प्रयोग किया है जिसमें हिन्दी के तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक है। प्रसाद आर्य संस्कृति के परम उपासक थे। भारत के अतीत गौरव की गाथा का वर्णन करते हुए वे अवचेतन की उन गहराईयों में उतर जाते हैं जहां पहुंच कर मनुष्य विचारक और दार्शनिक हो जाता है। 'कामायनी' ऐसे ही क्षणों में रचित एक महाकाव्य है जिसमें दार्शनिकता की प्रधानता है। यह प्रसाद की छायावादी और रहस्यवादी रचना है जिसमें भावों की गंभीरता के साथ–साथ शिल्प–गांभीर्य भी हैं। इसका कथानक अत्यंत मनोरम है जिसमें शब्दों एवं प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग है। प्रसाद के काव्य में रसानुकूल भाषा का प्रयोग मिलता है। वे थोड़े शब्दों में अत्यधिक भाव और गुण–क्रिया आदि से व्यक्ति या पदार्थ विशेष को बड़ी सफलता से व्यक्त करते हैं। इनकी कविता में अभिव्यक्ति की दृष्टि से अभिधा सौन्दर्य, लाक्षणिक प्रयोग एवं मनोहर भाव–व्यंजना मिलती है प्रसाद की अलंकार योजना भी अदभुत है। इन्होंने अपनी कविता में विभिन्न प्रकार के अलंकारों का प्रयोग करके अभिव्यक्ति सौन्दर्य का प्रमाण दिया है।

प्रसाद युग सृष्टा कहे जाते है। उनका चिन्तनशील मस्तिष्क अपने युग की अतिबौद्धिकता से उत्पन्न होने वाली हिंसा तथा अशांति को देखकर यह अनुभव करता था कि इसमें हृदय पक्ष का अभाव है। प्रसाद ने मानव के अर्थ–प्रेम, भौतिक बल सम्बन्धी अहंकार, नारी की हीन स्थिति, शासकों की मनमानी तथा सामयिक दुर्दशा का विरोध किया। उन्होंने इन समस्याओं का हल ढूंढ़ने के लिए अतीत की कथाओं में आधुनिकता की प्रतिस्थापना थी। उन्होंने भारत के अतीत गौरव का गान करते हुए सांस्कृतिक श्रद्धा से युक्त गीतों की रचना की। उनकी रचनाएं इस बात की प्रमाण हैं कि उन्होंने सांस्कृतिक पुनरूत्थान, धर्म एवं दर्शन का अद्‌भुत समन्वय एवं सार्वभौमिकता की स्थापना का प्रयास किया जिससे मानव संस्कृति की उन्नति हो सके और मानव कल्याण संभव हो सके। प्रसाद अपने समय के वर्ण–भेद से भी क्षुब्ध थे और उनकी दृष्टि में यही वर्णभेद समाज के विघटन का कारण था। आज के बुद्धिवादी युग में व्यक्ति और समाज के बीज संतुलन का अभाव है। प्रसाद ने अपनी रचना 'कामायनी' में मनुष्य को ऐसी स्थितियों के प्रति सावधान किया और अपने मानवतावादी विचारों द्वारा युगीन समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत किया। वास्तव में यह रचना प्रसाद के संघर्षमय जीवन का निचोड़ है। उनका काव्य उनकी आत्मा का शाश्वत संगीत है जो युग–युगान्तरों तक विश्व में गूंजता रहेगा।

प्रसाद का युग भारत और सम्पूर्ण विश्व के संदर्भ में मानव की भयावह त्रासदी का समय था। वैज्ञानिक आविष्कारों और औद्योगिक उपलब्धियों ने अपने प्रभाव से मानव की कोमल चितवृतियों को बड़ी निमर्मता से समाप्त करना शुरू कर दिया था। भौतिक सुखों के मायाभ्रम से मानव भ्रष्ट हो रहा था। दया, ममता, करूणा, विश्वास–त्याग, विसर्जन, समर्पण, सेवा, आस्था, निष्ठा और आत्मीयता जैसे कोमल जीवन मूल्य समाप्त होने लगे थे। मानव जीवन का करूण दुखान्त बन रहा था। ऐसे समय में प्रसाद ने अपनी कविता

के माध्यम से श्रृद्धा आस्था, विश्वास एवं निष्ठा का संदेश दिया जो प्रशंसनीय है।

प्रसाद की महान कृति 'कामायनी' के केवल 'चिंता सर्ग' पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। इसे समझाने के लिए 'कामायनी' की संक्षिप्त जानकारी आवश्यक होगा। यह प्रसाद की काव्य—प्रतिभा का सर्वोत्तम उदाहरण है। यह एक महाकाव्य है जिसके कथा प्रसंगों में अनुभूति एवं ज्ञान का सुन्दर समन्वय है। प्रसाद ने जलप्लावन (प्रलय) की घटना के आधार पर एक सुन्दर रचना की है। इसकी कथा वस्तु का विकास मानव की चिन्ता से शुरू होकर आनन्दावस्था तक जाने की यात्राा का इतिहास है। प्रसाद, इस कथा को पद्रह सर्गों में बांटा है। प्रथम सर्ग है 'चिन्ता' जिसमें जलप्लावन से बचा हुआ अकेला मनुष्य मनु हिमालय के शिखर पर बैठा अतीत के स्मरण में लीन है। समस्त वातावरण अवसाद से पूर्ण है और मनु भविष्य के प्रति निराशावान हैं। अगले सर्ग 'आशा' में परिवर्तन का संकेत है। बर्फ को चीरकर वनस्पति की कोपलें फूटने लगी हैं जिन्हे देखकर मनु भी आशावान होता है। तीसरे सर्ग 'श्रद्धा' में एक दिव्य नारी मूर्ति उपस्थित होती है। वह मनु से उसकी उदासी का कारण पूछती है और उसे उत्साहपूर्वक कर्मशील होने का संदेश देती है। वह मनु की सहचरी बन कर उसके साथ रहने लगती है। अगला सर्ग है—काम, जो मानव मन की अन्तर्वृतियों का सूचक है। मनु जीवन के प्रति श्रद्धावान होकर सांसारिक कामनाओं में लिप्त होता गया। अगला सर्ग 'वासना' कामसर्ग की विकसित स्थिति है। आगामी सर्ग 'लज्जा' में वासना संयमित होने लगती है। मनु के प्रति श्रद्धा का प्रणय समर्पण उसे लज्जा का अनुभव कराता है। श्रद्धा के प्रोत्साहन से मनु की जीवन प्रवृति विकसित होने लगती है। 'कर्म' सर्ग में वह कर्मशील जीवन अपनाता है। किलात और आकुलि नामक दो असुर प्रलय से बचने के बाद वहीं आ जाते हैं। ये दोनों मनु को उसके पालतू पशुओं का मांस खाने को प्रेरित करते हैं। मनु पशु बलि देकर यज्ञ करता है। श्रद्धा यह सब देखकर व्यथित हो उठती है। अगले सर्ग 'ईर्ष्या' में मनुष्य के पास सुख—सुविधाएं बढ़ जाती है और वह शिकार भी खेलने लगता है। श्रद्धा घरेलू कार्यों में व्यस्त रहती है और अपने होने वाली संतान के लिए तकली से सूत बुनती है। श्रद्धा को अपनी ओर से विरक्त होते देख वह उसे छोड़कर चला जाता है।

'इड़ा' में मनु सारस्वत प्रदेश पहुंचता है जहां उसकी भेंट इड़ा से होती है। वह मनु को सुख भोग और गलत कामों के लिए प्रेरित करती है। उसके पास रहते हुए वह भोग विलास में लिप्त हो जाता है। पीछे श्रद्धा एक पुत्रा को जन्म देती है। वह मनु के लौट आने की प्रतीक्षा करती है। उसके विरह में वह बेचैन रहती है। अगले सर्ग 'स्वप्न' में वह एक स्वप्न में मनु को सारस्वत प्रदेश में देखती है। वहां मनु ने एक नया प्रदेश बसा रखा है। इस प्रदेश में मनु के बनाए नियमों के अनुसार सभी कार्य होते है। वह पूरी तरह से इड़ा के नियन्त्राण में भी रहता है। एक दिन इड़ा की स्वीकृति के बिना मनु अपने भीतर की पशुवृत्ति पर संयम नहीं कर पाता। इड़ा की पुकार पर सारी प्रजा मनु के विरूद्ध हो जाती है और मनु कहीं जाकर छुप जाता है। मनु को स्वप्न में देखकर श्रद्धा भी चिंतित हो जाती है और एक अज्ञात भविष्य की चिन्ता में डूब जाती है।

'संघर्ष' सर्ग में मनु बहुत दुखी होता है कि जिस प्रजा के लिए उसने इतना परिश्रम किया वही उसके विरूद्ध हो गयी। वह इड़ा से भी क्षुब्ध है पर वह उसे समझाती है कि यदि नियामक ही नियम तोड़ता है तो व्यवस्था सही कैसे रह सकती है। मनु इड़ा पर मनमाना अधिकार चाहता है। प्रजा आकुलि तथा किलात से मिलकर पुनः उसका विरोध करती है। भीषण संघर्ष छिड़ जाता है। मनु आकुलि और किलात का वध करता है और स्वयं घायल होकर मूर्छित हो जाता है इससे अगले सर्ग का शीर्षक है—'निर्वेद'। इसमें घायल अवस्था में पड़ा मनु पश्चाताप करता है। वह मूर्छित अवस्था में पड़ा है। श्रद्धा अपने पुत्रा

को लेकर मनु को खोजती हुई वहां पहुंच जाती है। वह अपने स्वप्न की वास्तविकता पर चकित हो जाती है। पत्नी और पुत्रा को देखकर मनु के हृदय में आशा का संचार होता है पर वह श्रद्धा के सामना नहीं कर पाता। स्वयं पर लज्जित होता हुआ वह चुपचाप वहां से चला जाता है।

'दर्शन' सर्ग में मनु को वहां न पाकर श्रद्धा परेशान हो जाती है और फिर उसकी तलाश में निकल पड़ती है। इड़ा भी उससे मिलती है और श्रद्धा कुमार को उसके पास छोड़कर चली जाती है। जब वह सरस्वती के तट पर पहुंचती है तो उसे दो चमकती आंखे दिखती है। यह मनु है जो अपने पापों का पश्चाताप करने के लिए निमग्न होकर बैठा है। श्रद्धा उसे विषमता त्याग कर समरसता का संदेश देती है जिससे सभी दुख—विकार शान्त हो सकते है। मनु उसे शिव के चरणों में ले जाने का अनुरोध करता है।

'रहस्य' सर्ग में जिसके कुछ अंश पाठ्यक्रम में निर्धारित किए गए हैं। इस सर्ग में मानव जीवन के महत्वपूर्ण आयामों पर विचार किया गया है इसमें 'कामायनी' के दार्शनिक परिप्रेक्ष्य का सार निहित है। मनु और श्रद्धा हिमालय की तलहटी की ओर बढ़ते हैं। मनु की थकान उसे रोकती है पर श्रद्धा की प्रेरणा उसे आगे बढ़ाने का सम्बल प्रदान करती है। मनु उस मानव का प्रतीक है जो द्वन्द्व, अभाव, अतृप्ति और संत्रास से ग्रस्त है और वास्तविक आनन्द से वंचित है। इसका कारण है विषमता। यह विषमता मानव—मानव में ज्ञान और कर्म में, हृदय और बुद्धि में, सिद्धान्त और व्यवहार में तथा आचार और विचार में सर्वत्रा व्याप्त है। इस विषमता के कारण जीवन दुखदायी हो जाता है। मनुष्य अपने लिए सुख खोजता है। निरन्तर संग्रह, आत्मसुख की इच्छा, भोग विलास, छल और निर्ममता को प्रोत्साहन देते है। मनु इसी चिन्ता में बार—बार भटकता है। अधिकार के नाम पर अहंकार ग्रस्त भी है। स्वयं आत्मचिन्तन करता हुआ वह महसूस करता है कि अधिकाधिक सुखों का संग्रह करने की उसकी लालसा उसके जीवन—पथ को अंधेरे में ले जा रही है। इस तरह की आकांक्षाएं मनुष्य समाज में वर्गभेद का भी उत्पन्न करती हैं। इससे बचने का एक ही उपाय है— समन्वय और समरसता। यह समरसता आन्तरिक और बाह्य द्वन्द्व को समाप्त करके जीवन में शाश्वत आनन्द की सृष्टि कर सकती है। श्रद्धा मनु को इस समरसता का संदेश देती है। वह मनु को क्षितिज के पास तीन लोकों का साक्षात्कार कराती है। ये तीन लोक हैं— इच्छा, क्रिया और ज्ञान लोक। इच्छा मन में लालसा जगाती है, कर्म उन लालासाओं की पूर्ति का प्रयास है और ज्ञान दुख—सुख के चिंतन भ्रम में उलझ कर भटकाता है। इन तीनों में सामंजस्य ही जीवन की पूर्णता है।

मानव—मानव का यही ऐक्य 'कामायनी' की मूल कथा है। मानवतावाद इस रचना का मूल प्रतिपाद्य है। अगला और अंतिम सर्ग है — 'आनन्द'। इसके कुछ अंश पाठ्यक्रम में रखे गए हैं। इस सर्ग में श्रद्धा और मनु के साथ इड़ा और कुमार भी आए है। 'आनन्द' मनुष्य के मन की सर्वश्रेष्ठ वृति है। इसकी प्राप्ति के लिए मनुष्य को अनेकों अनुभवों और संघर्षों से गुजरना पड़ता है। प्रत्येक मनुष्य आनन्द प्राप्त करना चाहता है परन्तु इसके लिए कठिन साधना करती पड़ती है। आनन्दमय जीवन के लिए आपसी भेदभाव भुला कर संस्कृति की सेवा और सद्भावना की जरूरत होती है। इस सर्ग में मनुश्रद्धा की सहायता से आनन्द की स्थिति को प्राप्त करते है। यह जीवन की ऐसी समतल भूमि है जहां विश्व बन्धुत्व का निर्मल वातावरण फैला हुआ है। ऐसे दिव्य और पावन वातावरण को पाकर मनु के मन में एक विचित्रा शक्ति का स्त्रोत फूट पड़ता है। मनु का यही शक्ति स्त्रोत मानवता का आकर्षण और उसका इतिहास है।

इस सर्ग में इड़ा का प्रसंग भी आता है जो परम सुन्दरी, विदुषी, तर्क्रमयी और वाचाल स्त्राी है। वह मनु को कर्म का संदेश देती है और स्वयं भी परम कर्मशील है। उसका विश्वास है कि मनुष्य को अपना विकास करना चाहिए क्योंकि इस संसार में वे ही जी सकते हैं जो संसार की स्पर्धा में ठहर सकें और मानवता का

कल्याण करते हुए उसे शुभ मार्ग दिखा सकें–

'स्पर्धा में जो उत्तम ठहरें वे रह जावे
संसकृति का कल्याण करें शुभ मार्ग बतावे।'

इस सर्ग में इड़ा मानव तथा प्रजा को लेकर कैलाश पर्वत की यात्राा पर जाती है। यहां उसे शान्त मनु के दर्शन होते है और अखंड आनन्द की प्राप्ति होती है इस स्थान पर पहुंच कर इड़ा भी श्रद्धामय होकर आनन्द को प्राप्त करती है। इसी सर्ग में श्रद्धा और मनु के पुत्रा मानव का भी प्रसंग है। उसके एक हाथ में धर्म के प्रतिनिधि वृषम की रस्सी है। दूसरे हाथ में उसने त्रिाशूल पकड़ा हुआ है। इसमें उसका धर्म–परायण शौर्य अभिव्यक्त होता है। वह एक सिंह की भांति शक्तिशाली है और सुन्दर युवक है। कैलाश पर्वत पर श्रद्धा एवं मनु से भेंट होने के बाद वह भी आनन्दमय हो जाता है। मानव आधुनिक मनुष्य का प्रतीक है। प्रसाद ने इस पात्र के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि मनुष्य श्रद्धा (हृदय की प्रतीक) और इड़ा (बुद्धि की प्रतीक) के संतुलित समन्वय से आनन्द प्राप्त कर सकता है। श्रद्धापूर्वक बुद्धि से कर्म करने वाला मनुष्य ही अपने भाग्य का उदय कर सकता है और समरस होकर मानव कल्याण का कारण बनता है। इस सर्ग में मानव को इस आनन्दमयी स्थिति की उपलब्धि तभी होती है जब वह सांसारिक सुख को हेय समझता हुआ इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया का समन्वय कर अपनी बुद्धि को श्रद्धायम बना लेता है। यही जीवन का चरम लक्ष्य है।

1.2.3 छायावाद के सन्दर्भ में 'कामायनी' का मूल्यांकन :

'कामायनी' छायावाद की अन्यतम परिणति है, उसके समस्त सौन्दर्य–बोध, कलाबोध, अस्मिता; गौरव गरिमा; माधुर्य–मधुरिमा, सम्मोहक–रमणीयता का स्र्वण–काल है। भारतीय साहित्य में संभवतः किसी भी काव्यान्दोलन ने ऐसी अनुपम रचना कलाक्षेत्रा को नहीं दी है। 'कामायनी' में छायावाद का सर्वस्व है। उसका कुल आचरण, चरित्रा, व्यक्तित्व उसमें समाहित हो गया है। इसीलिए प्रारंभ में एक सूत्रा प्रस्तुत किया गया है कि 'छायावाद' ने 'कामायनी' को रेखांकन दिया है और 'कामायनी' ने 'छायावाद' को अवतरण चिन्ह प्रदान किए हैं। दोनों ने एक दूसरे को पहचान दी है और एक दूसरे से पहचान पाई भी है।

'कामायनी' के काव्यासन पर प्रकृति का संपूर्ण व्यक्तित्व अपनी नानाविधि मुद्राओं में अवतरित होता है। वह उसके विहार की लीलाभूमि है। एक प्रकार से उसके अभिसार का 'वृन्दावन' है। कामायनी की अधिकांश फलक प्रकृति को ही समर्पित है। केवल सारस्वत प्रदेश के अंश को छोड़ कर संपूर्ण रचना में प्रकृति की ही विविध भंगिमाएं हैं। इस प्रकार कामायनी प्रकृति के 'वर्चस्व' का बिंबधर्मी रूप है।

'कामायनी' – में प्रकृति के जो विविध रूप मिलते हैं उनमें प्रमुख रूप इस प्रकार हैं :–

- प्रकृति के विविध रूप,
- प्रकृति का शान्त रूप,
- प्रकृति का दिव्य अलौकिक रूप।
- प्रकृति का उद्दीपन रूप।

1.2.3.1 प्रकृति के विविध रूप :

कामायनी में प्रलय के दृश्यों में प्रकृति का ऐसा ही अतीव रौद्र, भयानक रूप चित्रिात हुआ है। इनमें प्रकृति का स्वतन्त्रा रूप अपनी संपूर्ण भयावहता को बिंबित करता है :–

उधर गरजतीं सिंधु लहरियां, कुटिल काला के जालों सी।

चली आ रहीं फेन उगलतीं, फन फैलाए व्यालों सी।

—कामायनी : चिन्ता सर्ग

प्रकृति का शान्त रूप :

कामायनी में प्रकृति का जो शान्त, स्वतन्त्रा व्यक्तित्व चित्रित हुआ है। उसमें रंग—गंध, सुवास—महक, संपूर्णता—कोमलता, माधुर्य—लवण और गति तथा चंचलता है। उसमें मानवीय आचरण, व्यवहार है और मानवीय संवेदना चेतना, अनुभूति तथा विंगलित होने और करने की अपार क्षमता भी है। प्रकृति के ऐसे रूपों में प्रसाद ने उसके स्वतन्त्रा व्यक्तित्व का मानवीय धरातल पर उद्‌घाटन किया है।

कामायनी के 'आशा' सर्ग के कुछ अंश प्रस्तुत है :—

उषा सुनहले तीर बरसती, जय—लक्ष्मी—सी उदित हुई।
उधर पराजित कालरात्रि भी जल में अन्तर्निहित हुई।

प्रकृति का दिव्य अलौकिक रूप :

कामायनी में अनेक स्थल ऐसे भी मिल जाएंगे जहां कवि ने प्रकृति में उस दिव्य सत्ता के साक्षात्कार किए हैं। ऐसे चित्राणों में उस अनन्त, विराट और अदृश्य लीलामय की अपार शक्ति के बारे में, मनु के मन में अनेक प्रश्न जगते हैं। जिज्ञासाएं जन्म लेती हैं। वह प्रकृति के रहस्यमय रूप के मर्म को जान लेने के लिए परम उत्कट हो उठता है। बार—बार ऐसे प्रश्न उसका अन्तर्मथन करते हैं :—

सिर नीचा कर किसकी सत्ता, सब करते स्वीकार यहां।
सदा मौन हो प्रवचन करते, जिसका, वह अस्तित्व कहां।

प्रकृति का उद्दीपन रूप :

कामायनी में चिन्ता सर्ग में पूर्व—स्मरणों के अन्तर्गत और काम, वासना तथा लज्जा सर्गों में प्रकृति का उद्दीपन रूप चित्रित हुआ है। ऐसे परिदृश्यों में प्रकृति मन की जागृत भावना को उद्दीप्त करती है। वस्तुतः ऐसे अवसरों पर पूर्व जागृत भावनाओं के प्रज्वलन में प्रकृति आहुति का सा कार्य करती है। उद्दीपन में यही प्रकृति की भूमिका रहती है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है :—

मधु बरसती विधु किरण है। कांपती सुकुमार।
पवन में है पुलक मंथर, चल रहा मधु भार।
तुम समीप, अधीर इतने आज क्यों है प्राण।
छक रहा है किस सुरभि से तृप्त होकर घ्राण।

कामायनी : सांस्कृतिक जागरण का उद्‌घोष

कामायनी अपने युग के समग्र सांस्कृतिक जागरण का एक स्वर में उद्‌घोष करती है। इसके रहस्य, दर्शन, आनन्द सर्गों में भारतीय चिन्तन दर्शन का मंगलनाद हुआ है। भारतीय संस्कृति अपने मूल संकल्प में 'समन्वयमूला' रही है। उसने जीवन की सरसता और आनन्द का सन्देश दिया है। यही है उसका आनन्दवादी जीवन दर्शन। कामायनीकार ने भी इसी दर्शन का प्रतिपादन किया है। केवल आस्था और श्रद्धा से ही आज का बुद्धिवादी व्यक्ति अपने जीवन के ज्ञानलोक, कर्मलोक और इच्छालोक में एक सामंजस्य स्थापित कर सकता है। श्रद्धा—शून्य स्थिति में उसके समग्र कर्म भ्रष्ट होंगे। जीवन के संघर्षों में बार—बार पराजित होगा। तब पुनः उसे वही

श्रद्धा संबल देगी। उसे जीवन के आनन्द मार्ग पर प्रशस्त करेगी। आनन्द के इसी मानसरोवर से समरसता की कलकल धारा फूटेगी। यहीं पर है जीवन का सन्तुलन बिन्दु, जीवन का समन्वय–बिन्दु –

समरस थे जड़ या चेतन, सुन्दर साकार बना था।
चेतनता एक विलसती, आनन्द अखण्ड घना था।

कामायनी में भारतीय दर्शन और चिन्तन की न केवल गंध–गरिमा ही है, प्रत्युत उसकी व्याख्या भी है।

1.2.3.2 कामायनी का अंगी रस :

कामायनी में वैसे तो कई रस है। उनका गहन अतीव प्रभावी शैली में हुआ है। प्रलय चित्राण में रौद्र रस का समुदाय होता है। लज्जा; वासन निष्काम सर्गों में संयोग श्रृंगार का चित्राण हुआ है। मनु के पलायन के उपरान्त वियोग श्रृंगार का भी बिंबान्वयन हुआ है। सारस्वत प्रदेश के संघर्ष के सन्दर्भ मे मनु के मन में घोर आत्म ग्लानि, विरक्ति होती है। एक बीतराग–सा उसमें उदित होने लगता है। यही वैराग्य भावना श्रद्धा के शुचि संसर्ग में उसे जीवन के आनन्द पथ पर अग्रसर करती है। अब वह जनमंगल के कल्याणकारी मार्ग पर बढ़ने और वैराग्यपूर्ण मन में एक दिव्य ज्योति जगने लगती है। वह सामंजस्य का मर्म जान जाता है। संजीवनी उसे मिल जाती है। इसी में जीवन का आनन्द निहित है।

अतः यह आनन्दवादी शान्त जीवन दर्शन ही कामायनी का अंगी रस है। एक तो यह केन्द्रीय महत्व का रस है। दूसरे सभी रसों के संपोषण से इसे सर्वाधिक महत्वपूर्ण और मूर्धन्य स्थान है। इसी का लेखक रचना के अन्तिम सर्गों में बार बार रेखांकन करता है। इसी आनन्द के अमृत से जीवन की समरसता की कलकल धारा बहती है। जीवन के विरोध में सामंजस्य स्थापना और समसेतु रचना। बस; तब जीवन आनन्द ही आनन्द है।

1.2.4 कामायनी का काव्य सौष्ठव एवं काव्य शैली :

कामायनी के काव्य सौष्ठव की गरिमा अत्यन्त महनीय है। इसका अन्तरंग जितना महिमावान बहिरंग भी उतना ही भव्य और दीप्तिवान है। इसमें भाव जगत का औदात्य भी है और शिल्प का वैराग्य भी है। कथ्य एवं संरचना तन्त्रा दोनों ही अतीव प्रकृष्ट और उत्कृष्ट हैं।

कामायनी के काव्य सौष्ठव की चर्चा निम्नलिखित सन्दर्भों में की जा रही है।

- भाव सौन्दर्य : अमूर्त भावों का मूर्तिकरण :
- सौंदर्यबोध : कतिपय विशद फलक,
- अजेय जीवन : दर्शन तथा समरसता का दिव्यनाद :
- बिम्ब विधान :
- अप्रस्तुत विधान :
- प्रतीक योजना :
- काव्य शैली :

भाव सौन्दर्य : अमूर्त भावों का मूर्तिकरण :

कामायनी का भाव जगत अत्यन्त समृद्ध एवं विशद है। ऐसी भाव–सम्पदा का प्रसाद ने अत्यन्त मनोरम मूर्तिकरण किया है। वस्तुतः छायावादी कवियों ने अमूर्त एवं सूक्ष्म भावों को बड़े ही कौशल से प्रत्यक्षीकरण किया है। कामायनी तो है ही अमूर्त मनोवृत्तियों की मूर्त व्याख्या। सूक्ष्म चित्त–वृत्तियों की मनोवैज्ञानिक विकास–यात्राा। प्रसाद ने इस अमूर्त यात्राा को मूर्त रूप प्रदान किया है।

'चिन्ता' हृदय की ज्वलनशील प्रवृत्ति है : सर्वथा अमूर्त और अदृश्य। प्रसाद ने इसकी सम्पूर्ण अदृश्यता को पूर्णतया सगोचर बना दिया है। 'चिन्ता' सर्ग में मन का चिंतित रूप, उसकी चिन्ता मुद्राएं, भंगिमाएं उसे व्यक्त करती हैं।

निम्नोद्धत काव्यांशों से वह वक्तव्य स्पष्ट हो जाएगा :–

ओ चिन्ता की पहली रेखा, अरी! विश्व–वन की व्याली।
ज्वालामुखी स्फोट के भीषण, प्रथम कंप सी मतवाली।
हे अभाव की चपल बालिके; री ललाट की खल रेखा।
हरी–भरी सी दौड़–धूप ओ; जल–माया की चल रेखा।

'मृत्यु' के हिमशीत रूप को प्रसाद ने बड़े ही सूक्ष्म कौशल में मूर्तिमान किया है। वह जीवन की अन्तहीन निद्रा–समाधि है। उसकी गोद 'हिमानी' की भांति शीतल है। मृत्यु का यह हिम–बिन्दु इस बिम्ब पूर्ण में उभारों सहित स्पष्ट हुआ है :–

मृत्यु! अरी चिर निद्रे, तेरा, अंक हिमानी सा शीतल।
तू अनन्त में लहर बनाती, काल–जलधि की–सी हलचल।

कामायनीकार ने 'आशा' के प्रेरणादायक और स्फूर्तिवान अमूर्त रूप को भी रंग–रेखाओं से व्यक्त किया है।

यह क्या मधुर स्वप्न–सी झिलमिल, सदय हृदय में अधिक अधीर।
व्याकुलता सी व्यक्त हो रही, आशा बनकर प्राण समीर।

उपर्युक्त उद्धरण में 'आशा' का अमूर्त चरित्रा 'मधुर स्वप्न की झिलमिल' माया के रूप में प्रत्यक्ष हुआ है। 'आशा' मन की व्याकुल स्थिति से ही 'प्रेरणादायी समीर' बन कर जन्म लेती है और जीवन को एक रचनात्मक प्रेरणा देने की भूमिका निभाती है।

इसी प्रकार प्रसाद ने 'लज्जा' के अतीव कोमल सूक्ष्म और अमूर्त रूप को भी विविध रंगों में उभरा है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :–

कोमल किसलय के अंचल में, नन्हीं कलिका ज्यों छिपती–सी;
गोधूलि के धूमिल पट में; दीपक के स्तर में दिपती–सी।

मानव जीवन में 'लज्जा' का उदय कब, कैसे होता है? नारी–मन में वह कैसे समुदित होती है। उसका एक उत्तर है उपर्युक्त काव्यांशों में। जैसे कोमल–कोमल कोंपलों में एक छोटी–सी कलिका प्रस्फुटित होती है। वैसे ही मन के कोमल–भावों से 'आशा' का पल्लव फूटता है। जैसे एक झीने आंचल की ओट में कोई दीप–लौ दिपदिपाती हो वैसे ही मन के कुहासों में 'आशा' की किरण फूटती है।

सौन्दर्य बोध के विषद फलक :

'छायावादी सौन्दर्यबोध' छायावादी कवियों के परिष्कृत संस्कारों अभिजात अभिरस अभिव्यक्ति करता है। प्रसाद का सौन्दर्यबोध उनकी ऐसी ही सुरुचि संपन्नता को द्योतन हो। 'रीतिकालीन' स्थूल रूप—चित्राण की अपेक्षा प्रसाद ने अनन्त प्रसाद ने अनन्त दिव्य रूपराशि का प्रभाव के धरातल पर किया है। रूप का आस्वाद्यमान रूप बिंबित किया है। उसमें संवेदन की अपार शक्ति है। आनन्द प्रसाद के विशद सौन्दर्यबोध का परिचय मिल जाता है।

चंचला स्नान कर आवे, चन्द्रिका पर्व में जैसे।
उस पावन तन की शोभा आलोक मधुर थी ऐसे।

'कामायनी' में प्रसाद ने 'श्रद्धा' के दिव्य रूप को ऐसे ही परिष्कृत रंगों में रंगान्वित किया है। उसके व्यक्तित्व के अंतरंग और बहिरंग के सौन्दर्य को अतीव प्रभावी रूप में चित्रित किया है। एक विचारार्थ प्रस्तुत है :—

और देखा वह सुन्दर दृश्य, नयन का इन्द्रजाल अभिराम।
कुसुम वैभव में लता समान, चन्द्रिका में लिपटा घनश्याम।

यह था कामायनी का प्रथम रूप—दर्शन। प्रथम नयन—मिलन का प्रभाव। प्रथम दर्शन का प्रभाव—प्रसाद ने 'आंसू' खंड काव्य में निरूपित किया है।

मधु राका मुसकाती थी, पहले देखा जब तुमको।
परिचित से जाने कब के तुम लगे उसी क्षण हमको।

श्रद्धा के व्यक्तित्व का अंतरंग—बहिरंग एक साथ ही इन पंक्तियों में साकार हो उठा है।

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष स्त्रोत—सी बहा करो; जीवन के सुन्दर समतल में।

अजेय जीवन—दर्शन : समरसता का दिव्य नाद :

कामायनी की भाव—सम्पदा अपने अमृत रूप से आज के मानव को एक प्रबल प्रेरणा देती है। जिस प्रकार संघर्षचूर मनु; प्रलय—प्रताड़ित मनु; द्वन्द्व—दलित मनु; चिन्ताकातर! उद्विग्न! उदभ्रान्त! ज्वलनशील मनु कामायनी में श्रद्धा के सम्पर्क में आ कर जीवन की विकट अक्षोहिर्णियों (सम्पूर्ण चतुर्गिणी सेना) का सामना करने का अपराजेय मनोबल पा जाता है उसी प्रकार पाठक को श्रद्धा के प्रेरणादायक संवाद नव—शक्ति प्रदान करते हैं :—

दुःख की पिछली रजनी बीच; विकसता सुख का नवल प्रभात।
एक परदा यह झीना नील; छिपाए से जिसमें सुख गात।

सामंजस्य के आनन्दमय धरातल पर कामायनीकार ने समन्वय और समरसता की मधुर कल्पना की है। इसी में से दिव्य मनोहर संगीत निसृत होता है। उसमें स्नान कर सभी परमानन्द प्राप्त होते हैं।

समरस थे जड़ या चेतन, सुन्दर साकार बना था।
चेतनता एक विलसती, आनन्द अखण्ड घना था।

इस प्रकार कामायनी का यह सन्देश अपनी सनातन चिरन्तनता के कारण सार्वजनीन, सार्वभौमिक, अलौकिक हो गया है।

बिम्ब विधान :

वस्तुतः सम्पूर्ण कामायनी अतीव भव्य कलात्मक और दिव्य बिम्बों की एक अजन्ता है। रंग, गन्ध, वाद भरे रंग—बिरंगे बिम्ब, लघु, माध्यम एवं विराट आकार के फलकों पर प्रदीप्त हो उठे

हैं। उनकी योजना नितान्त सहज एवं ऋृजु प्रकार की है। उनमें तैल रंगों की—सी कान्त विभा भी है और जल—रंगों अज—दीप्ति भी है। उनमें विशद छाया—प्रकाश का संयोजन और ध्वनि तथा नादयोजना भी है। इनके अलावा कामायनी के गतिशील चित्रा छायावादी बिम्बयोजना का अतीव उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत करते हैं। कामायनी में रचित कतिपय विविध रंगों के बिम्ब इस प्रकार हैं :—

पूर्ण रेखा बिम्ब :

कामायनी के प्रारम्भ में ही मनु के कुछ रेखा—बिम्ब मिल जाते हैं। इनमें रेखाओं का उभार अत्यधिक है। लगता है कि अतीव हल्के प्रकार के कुछ रंग—संस्पर्श कहीं—कहीं लगा दिए गए हैं :—

चिन्ता कातर वदन हो रहा, पौरुष जिसमें ओत—प्रोत;
उधर उपेक्षामय यौवन का बहता, भीतर मधुमय स्त्राोत।

गंध बिम्ब :

कामायनी का कार्य—व्यापार प्रकृति के मनोरम एवं सुगन्धित वानस्पतिक क्षेत्रा में होता है। यही उन क्षेत्राों से चुने गए बिम्बों में भी रूपान्तरित हो गई है। इनसे उठने वाली गन्ध पाठक को गहरे विगलित कर जाती है :—

सौरभ से दिगन्त पूरित था, अन्तरिक्ष आलोक अधीर;
सब में एक अचेतन गति थी, जिसमें पिछड़ा रहं समीर।

नाद ध्वनि बिम्ब :

प्रलय के दृश्यों में जिन बिम्बों की रचना हुई है उनमें भीषण ध्वनियों का संयोजन किया गया है। वैसी ही घनघोर गर्जनाएं इन शब्द बिम्बों से निसृत होने लगती है। तब इन बिम्बों में गति का संचरण जो जाता है। ऐसे प्रतीत होता है कि एक गतिशील 'बिम्ब—रील' आंखों में तिर—तिर जा रही हो।

उधर गर्जती सिंधु लहरियां, कुटिल काल के कालों सी।
चली आ रहीं फन उगलतीं, फन फैलाए व्यालों—सी।

प्रतीक एवं छाया प्रकाश बिम्ब :

ऐसे बिम्बों में प्रसाद ने आलोक—रेखाओं से बिम्बों की रंग सज्जा की है। इससे बिम्बों में एक रश्मि काव्य प्रदीप्ति आ गई है। कहीं प्रकाश के साथ छाया के भी हल्के गहरे सस्पर्श लगाए गए हैं।

संध्या घनमाला सी सुन्दर, ओढ़े रंगबिरंगी छींट।
गगन चुम्बनी शैल—श्रेणियां, पहने हुए तुषार किरीट।

स्पर्श बिम्ब : प्रसाद ने ऐसे स्पर्श बिम्बों की रचना भी की है जिनमें संवेदन—जागरण की अपार क्षमता है। वे हमारे विभिन्न ऐन्द्रियबोधों को छूते हैं और गहरे में संद्रविक भी कर जाते हैं। कुछ बिम्ब प्रस्तुत हैं :—

वाष्प बना उजड़ा जाता था, वह भीषण जल संघात।
सौर चक्र में आवर्तन था, प्रलय निशा का होता प्रात।

गतिशील बिम्ब : चिन्ता सर्ग के अर्न्तगत प्रलय का जो चित्राण हुआ है उसमें गतिशील बिम्बों की पूर्ण माला है। हाहाकार, क्रंदन, कठिन कठोर कुलिशों का चूर—चूर होना, दिगन्तों में

भीषण अधीरता दिग्दाहों से उठ रहे प्रलयकालीन धुएं के बादल। गगन में करका का भीम प्रकंपन शंपाओं की तुमुल गर्तना पंचभूत का भैरवराग, सिंधु—लहरियों की भीषण हुंकारें, नाग फूत्कारें, धरा का धंसना, ज्वालामुखियों गगनभेदीय विस्फोटक प्रलयकालीन तांडव नर्तन। इन सब का चित्राण करते हुए अनेक सशक्त, प्राणवान और ओजस्वी बिम्बों की पूरी दीर्घ माला इस में उपलब्ध होती है :—

धसती धरा, धधकती ज्वाला, ज्वालामुखियों का निश्वास।
और संकुचित क्रमशः उसके, अवयव का होता है ह्रास।

इस प्रकार श्री प्रसाद ने कामायनी में नाद बिम्बों ध्वनि बिम्बों, रेखा बिम्बों, शर्तिशील, बिम्बों, स्पर्श बिम्बों, छाया—प्रकाश बिम्बों की रचना में अपने अपूर्व कौशल का परिचय दिया है। इन्हीं के योगदान से कामायनी का निवेद्य न केवल काव्यात्मक ही बन पाया है प्रत्युत संप्रेश्य भी बना है। यह उसके काव्य सौष्ठव का सर्वाधिक रम्य पक्ष है।

प्रतीक विधान : वस्तुतः सम्पूर्ण कामायनी की रचना ही प्रतीकात्मक प्रकार की है। सभी पात्रों की प्रतीकात्मक व्यंजनाएं हैं। सभी घटनाओं मे भी प्रतीकात्मक संकेत हैं। सभी सर्गों का भी मनोवैज्ञानिक दृष्टि से महत्व है। जैसे :—

लो चला! आज मैं छोड़ यहीं, संचित संवेदन भार पुंज।
मुझको कांटे ही मिलें धन्य, हो सफल तुम्हें यह कुसुम कुंज।

इस सन्दर्भ में दो प्रतीक हैं : कांटे और कुसुम कुंज। वे प्रतीक हैं सुख और दुःख के। भले ही ये कोई नए प्रतीक न हों परन्तु इनके प्रयोग में एक नवीनता अवश्य ही आभासित होती है।

अप्रस्तुत प्रधान : कामायनी में अप्रस्तुत योजनाओं की एक भव्य प्रदर्शनी लगी है। कवि ने उपमेय के लिए नए—नए उपमानों की अन्वेषणा की है। इस प्रसंग में एक विशेष संयोजन—नीति का प्रसाद ने परिचय दिया है। उन्होंने जिन उपमानों का प्रयोग किया है वे इतने विशद, गम्भीर और सम्पन्न है कि उनकी तुल्यता में आ कर उपमेय धन्य हो उठे हैं। उनके सम्पर्क में, उनके गौरव में संवर्द्धन हुआ है। ये प्रकृष्ट उत्कृष्ट हुए हैं। उनमें एक मणिकान्त विभा का संचार हुआ है, एक सहज दीप्ति से वे आलोकित हो उठे हैं।

उपर्युक्त योजना में प्रसाद ने मुख्यतः उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा अलंकारों के प्रयोग में विशेष दक्षता का परिचय दिया है। अलंकारों के संयोजन में कवि ने न तो कहीं पर अनुपात भंग होने दिया है और न कहीं पर उपमेय को उपमान के सन्दर्भ में दबने ही दिया। उपमान उपमेय के मूल सौंदर्य को कहीं पर भी ग्रसित करते नहीं मिलेंगे। कुछेक उदाहरण प्रस्तुत हैं :—

— उसी तपस्वी से लंबे थे, देवदार दो चार खड़े।
— नील परिधान बीच सुकुमार। खुला रहा मृदुल अध—खुला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघ—वन बीच गुलाबी रंग।

कामायनी की काव्य—शैली :

कामायनी एक ऐसा महाकाव्य है जिसमें महाकाव्य के परिवर्तित रचना विधान के कीर्तिमान स्थापित हुए हैं। इस सूत्रा पर तो कामायनी के महाकाव्यत्व के सन्दर्भ में ही विचार अपेक्षित है। यहां तो केवल यही चर्चा अपेक्षित है कि कामायनी के महाकाव्य रूप में भी प्रसाद ने अनेक शैलियों का प्रयोग किया है :—

पूर्व दीप्ति शैली : मनु चिन्ता सर्ग में अपने वैभव के समय का स्मरण इसी शैली के अन्तर्गत करते हैं किसी अतीतमुखी घटना का अपने वर्तमान में स्मरण इसी शैली का प्रयोग माना जाता है।

–आत्मकथन अथवा स्वगत शैली : मनु अपने एकान्त में आत्म कथन अथवा स्वगत कथन शैली के अनुसार अपने बारे में विचार करते हैं।

–छाया संवाद–शैली : लज्जा सर्ग में कामायनी अथवा श्रद्धा–लज्जा से इसी प्रकार की करती है। इसके संयोजन से कामायनी की संरचना में एक भव्य प्रकार की नाटकीयता आ गई है।

–संवाद शैली : इसका तो प्रायः सभी सर्गों में प्रयोग किया गया है। इससे भी कथा की नाटकीयता का संयोजन हुआ।

–स्वप्न शैली : मनु के सारस्वत नगर में घायल होने का आभास श्रद्धा स्वप्न में पाती है। वह अपने पुत्रा मानव को साथ लेकर उसकी खोज में गीत गाती हुई निकल पड़ती है। इसके प्रभावोत्पादकता का संचार हुआ है। उसकी गति में क्षिप्रता आई है।

फैंटेसी शैली का प्रयोग : त्रिपुर दर्शन के प्रसंग फैंटेसी के धरातल के हैं। एक धुंधलका गहरा कुहासा सा। साथ ही त्रिपुरदाह के समय उनमें श्रद्धा की मन्द स्मिति रेखा का कौंध जाना–फैंटेसीपरक ही है। इससे रचना के शिल्प–तन्त्रा में एक अद्‌भुत रोचकता और प्रभावोत्पादकता आ गई है।

इन विविध काव्य–शैलियों के योगदान से कामायनी का महाकाव्यत्व और भी अधिक प्रभावशाली और उत्कृष्ट हो गया है।

1.2.4.1 स्वयं जांच अभ्यास

1. कामायनी के सर्गों पर संक्षिप्त टिप्पणी करें।

....

....

....

1.2.5 सारांश

जयशंकर प्रसाद ने कविता में प्रेम, सौंदर्य और दर्शन की अभिव्यक्ति करते हुए उसे उच्चता के शिखर पर पहुँचाया है। उन्होंने व्यक्ति के जीवन में चिन्ताओं के निवारण का हल श्रद्धा और आस्था में ढूंढा और समरसता की स्थिति को आनन्दावस्था का चरम माना है।

1.2.6 प्रश्नावली

1. जयशंकर प्रसाद के काव्य की कोई चार विशेषतायें लिखें।
2. जयशंकर प्रसाद की काव्य भाषा पर विचार करें।
3. छायावाद के परिप्रेक्ष्य में कामायनी का मूल्यांकन करें।
4. कामायनी के काव्य सौष्ठव पर विचार करें।
5. जयशंकर प्रसाद के काव्य साहित्यिक विशेषताओं पर विचार करें।

1.2.7 सहायक पुस्तकें

1. प्रसाद प्रतिभा – इन्द्रनाथ मदान
2. प्रसाद का काव्य – डॉ. प्रेम शंकर
3. छायावाद के आधार स्तम्भ – राम जी पांडेय

पाठ संख्या : **1.3** लेखिका : डॉ. हरिसिमरन कौर

कामायनी की दार्शनिकता, समरसता, सांस्कृतिक चेतना और रूपक तत्व

दार्शनिकता :

इकाई की रूपरेखा

1.3.1 उद्देश्य
1.3.2 प्रस्तावना
1.3.3 दार्शनिकता
1.3.4 समरसता
1.3.5 सांस्कृतिक चेतना
1.3.6 रूपक तत्व
 1.3.6.1 स्वयं जांच अभ्यास
1.3.7 सारांश
1.3.8 प्रश्नावली
1.3.9 सहायक पुस्तकें

1.3.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में आप कामायनी की दार्शनिकता, समरसता, सांस्कृतिक चेतना और रूपक तत्व के बारे में जानकारी पाएंगे।

1.3.2 प्रस्तावना

कामायनी जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध छायावादी रचना है। इसमें जयशंकर प्रसाद जी की दार्शनिक पक्ष की अनुभूति देखने को मिलती है। इसमें मनु और श्रद्धा के प्रेम का दार्शनिक चित्राण हुआ है।

1.3.3 दार्शनिकता

कामायनी की दार्शनिकता के सम्बन्ध में विचार करने से पहले 'दर्शन' और 'दार्शनिकता'के स्वरूप को स्पष्ट कर लेना आवश्यक है। 'दर्शन' शब्द के मूल में संस्कृत की 'दृश' धातु विद्यमान है जिसका अर्थ है – देखना। वस्तुतः किसी विषय या वस्तु के सम्यक् अनुशीलन और इसकी सर्वागतः छानबीन करके अवधारित किये गये सिद्धान्तों का नाम ही दर्शन है। इस प्रकार दर्शन मूलतः जिज्ञासा और तत्पश्चात् तर्क–वितर्क के परिणामस्वरूप प्राप्त निष्कर्षों का समुच्चय है। दूसरे शब्दों में जिज्ञासा, संशय, तर्क–वितर्क ही दर्शन का मूलाधार है। तत्वदर्शी चिन्तकों के सम्मुख आदिकाल से 'स्व' और 'पर' एवं दृश्य–अदृश्य जगत् के सम्बन्ध में विभिन्न प्रश्न उपस्थित होते रहे हैं। यथाः यह सृष्टि क्या है? इसका रचयिता कौन है? इसका निर्माण

किन तत्वों में हुआ है? जीव की जन्म से पूर्व और मरणोपरान्त स्थिति क्या है–आदि।

कामायनी जयशंकर प्रसाद के गहन अध्ययन, गम्भीर, चिंतन–मनन और प्रौढ़ जीवन–अनुभव की चरम परिनति है। उस में भारतीय परंपरा के अतिप्रसिद्ध 'शैव दर्शन' का परिप्रेक्ष्य और प्रभाव स्पष्ट झलकता है।

'शैव' दर्शन के अन्तर्गत प्रमुखतया चार संप्रदान प्रचलित हैं–(1) गुजरात का पाशुपत (2) तमिलनाडु का शैव–दर्शन, (3) काश्मीर का प्रत्यभिज्ञा–दर्शन, (4) रसेश्वर दर्शन परंपरा इस समय अतीत के आवरण में लुप्त हो चुकी है। कामायनी का सम्बन्ध काश्मीर में प्रचलित दर्शन की 'प्रत्यभिज्ञा' शाखा से है। इसके अनुसार पांच प्रमुख पदार्थ हैं–कारण, कार्य, विधि, योग और का अंत। 'शिव' कारण–स्वरूप है। दुख का अन्त 'मोक्ष' है। इस दर्शन में तीन तत्व स्वीकृत हैं–'पति', 'शिव', 'पशु' अर्थात् जीव; और 'पाश' अर्थातृ 'बन्धन' जिसका कारण अणु, कर्म या माया को मान सब इस तरह 'पाश' या 'बन्धन' तीन प्रकार के हैं–आणव, कर्म, मायीय। इस 'पाश' (बंधन) में आबद्ध (जीव) को परम तत्व 'शिव' का फिर से ज्ञान करा देने का नाम है–'प्रत्यभिज्ञा'।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम जान चुके हैं कि इस ब्रह्माण्ड में 'शिव' परमतत्व है। 'शिव' सता 'पराशक्ति' कहलाती है। 'शिवपुराण' के अनुसार इस पराशक्ति से पांच शक्तियों की उत्पत्ति होती है

(1) चित्, (2) आनंद, (3) इच्छा, (4) ज्ञान, (5) क्रिया।

'शिव' अथवा पराशक्ति का 'चित्'–तत्व कामायनी में चिति, चैतन्य, चेतनता आदि शब्द के माध्यम से व्यंजित हुआ है। यह चिति या चेतना (चेतनता) सृष्टि की आद्य शक्ति है जो विश्व के उत्थान और विकास का कारण है।

नीचे जल था, ऊपर हिम था
एक तरल था एक सघन,
एक तत्व को ही प्रधानता,
कहो उसे जड़ या चेतन।

जड़ और चैतन्य का यह एकत्व (अद्‌वैत) बीच के कथा–विस्तार में भले ही कहीं–कहीं बिखरा दिखाई देता हो किंतु काव्य की परिसमाप्ति कवि ने इसी अद्वैत सौन्दर्य से उत्पन्न अखंड आनंद की स्थिति है :–

समरस थे जड़ या चेतन,
सुन्दर साकार बना था;
चेतनता एक बिलसती,
आनन्द अखण्ड घना था।

आनंद तत्व कामायनी का केन्द्र–बिन्दु है। कहीं इसे चेतना का विषय कहा गया है, कहीं 'सर्वे सुखिनः भवंतु' (सभी सुखी हो) की भावना का। 'जियो और जीने दो' का संदेश (श्रद्धा) बार–बार मनु को देती है। उसका चरम लक्ष्य भी आन्तरिक आनंद ही तो है–

(क) औरों को हंसते देखो, मनु,
हंसो और सुख पाओ;
अपने सुख को विस्तृत कर लो,
सबको सुखी बनाओ।

(ख) सब की सेवा न पराइ,
वह अपनी सुख संसृति है।

यह आनंद कहीं अन्य नहीं, मानव के अपने भीतर विद्यमान है; आवश्यकता है केवल उस स्वार्थ लिप्सा के आवरण को हटाने की। कवि ने आनन्द प्राप्ति के लिए इच्छा, क्रिया और ज्ञान के सामंजस्य को महत्त्व तो दिया ही है तीनों की विषमता के दुष्परिणाम को भी बताया है :—

ज्ञान दूर कुछ, क्रिया भिन्न है,
इच्छा क्यों पूरी हो मन की;
एक दूसरे न मिल सके
यह विडम्बना है जीवन की।

और इनके सामरस्य—जन्य आनन्द की छांव भी देखिये —

समरस थे जड़ या चेतन
सुन्दर साकार बना था;
चेतनता एक बिलसती,
आनन्द अखंड घना था।

उपर्युक्त उदाहरणा से, कामायनी में 'शैव—दर्शन' के परमतत्व रूप पराशक्ति की व्याप्ति का पर्याप्त आभास मिल जाता है। अब दूसरे तत्व 'जीव' (पशु) पर विचार करें जिसे प्रत्यभिज्ञादर्शन के अनुसार चित्—तत्व का ही रूप माना गया है। उसके पृथक् प्रतीत होने के कारण 'पाश' (माया जाल) पांच रूपों में है—कला, विद्या, काल, राग, नियति। ये पांच (माया के) 'कंचुक' कहलाते हैं ('कंचुक पंचवलिताः—इत्यादि— प्रत्यभिज्ञाहृदय)।

संकुचित असीम अमोध शक्ति,
जीवन को बाधामय पथ पर ले चले भेद से भरी भक्ति;
या कभी अपूर्ण अहंता में हो रागमयी सी महाशक्ति।
व्यापकता नियति प्रेरणा बन अपनी सीमा में रहे बन्द।

कामायनी का मनु 'शैव—दर्शन' का 'जीव' है जो पांचों कंचुकों (मायाजन्य बन्धनों) में हो अपने चित् (शिव) स्वरूप को भूल कर भटकता है। श्रद्धा पराशक्ति की प्रतीक है जो उसे आत्मबोध प्रत्यभिज्ञा प्रदान करती है। मनु के लिए कोई पराया नहीं रहता, सभी अपने कुटुम्बों से लगते हैं और स्थिति आ जाती है—

शापित न यहां है कोई, तापित पापी न यहाँ है,
जीवन वसुधा समतल है समरस है जो कि जहां है।

यही कामायनी का दार्शनिक परिप्रेक्ष्य है।

1.3.4 समरसता :

हम यह जान चुके हैं कि कामायनी का प्रतिपाद्य कथ्य या साध्य 'आनन्द' है जिसे रचनाकार 'शैव—मत' के 'प्रत्यभिज्ञा'—दर्शन की भित्ति पर प्रतिष्ठित किया है। इस साध्य (आनन्द) का साधन है समरसता। समरसता मार्ग है, आनन्द मंजिल। समरसता की भूमि पर आनन्द की अजस्त्रा धारा प्रवाहित होती है। समरसता का अभिप्राय है विभिन्न वस्तुओं, तत्वों में संतुलित सामंजस्य। यह सामंजस्य सम—अनुपात होना चाहिए। 'शिव' और 'शक्ति' का सामरस्य न हो तो विषमता की स्थिति बन जाती है। सुख—दुख समरसता जीवन को संतुलित बनाती है।

शरीर के विभिन्न अंग यदि समान अनुपात से सुगठित न हों तो सौंदर्य नहीं रहता। प्रकृति में विविध रंग—युक्त वस्तुओं का सामरस्य ही सौंदर्य की सृष्टि करता है। कामायनी में जयशंकर प्रसाद ने इसी समरसता का संदेश दिया है जो कि आनन्द से पहले की स्थिति है। श्रद्धा अपने आप को इस के हाथों सौंपती हुई कहती है—

सब की समरसता का प्रचार
मेरे सुत! सुन मां की पुकार।

इससे पहले मनु जीवन में, सुख—दुख में, कर्म—भोग में, इच्छा—क्रिया—ज्ञान में, हृदय और मस्तिष्क में समरसता नहीं रख पाने के कारण कई बार भटक चुका था। श्रद्धा ने बार—बार उसे समन्वय वृत्ति की ओर उन्मुख किया; किन्तु वह असंतुलन में ही झूलते रहने के कारण कभी आत्मग्लानी का कभी प्रजा के रोष का विकास हुआ। अन्ततः जब उसकी अन्तः वृत्ति समरसता के महत्व को स्वीकार कर लेती है तभी उसे स्वतंत्रा एकरूपता दिखाई देती है, आनन्द सागर लहराता प्रतीत होता है—

समरस थे जड़ या चेतन,
सुन्दर साकार बना था;
चेतनता एक विलसती,
आनन्द अखंड घना था।

उल्लेखनीय है कि समरसता किसी व्यक्ति—विशेष तक ही सीमित नहीं; उस पर सभी का समान अधिकार है—

नित्य समरसता का अधिकार
उमड़ता कारण जलधि समान;
व्यथा से नीली लहरों बीच
बिखरते सुख मणि गण द्युतिमाने।

भीषण तूफान समुद्र की नीली उत्ताल तरंगों में हो जिस प्रकार सीप—मोती—मणियों की दमक निखरती है उसी प्रकार व्यथा के सागर की लहरों के थपेड़े खाकर ही मनुष्य सुख अनुभव करता है।

विरोधी वृत्तियों का समन्वय, विपरीत तत्वों का संतुलित सामरस्य ही जीवन को स्वस्थ बना सकता है। कामायनी में इस समरसता को कई रूपों में व्यावहारिक धरातल पर सार्थक होते दिखाया गया है। प्रकृति और पुरुष, सुख और दुःख, बुद्धि तथा हृदय, आकांक्षा और तृप्ति, अधिकार और अधिकारी, राजा और प्रजा, व्यक्ति और समाज तथा इच्छा और कर्म, कर्म और ज्ञान में जब तक द्वन्द्व रहता है, तब तक हलचल, अशांति, अव्यवस्था, अस्थिरता बनी रहती है।

प्रकृति और पुरुष के द्वन्द्व का साक्षात्कार कामायनी के आरम्भ में ही दिखायी देता है। चिंताग्रस्त 'पुरुष' प्रकृति के भीषण प्रकोप को देखकर आतुर और व्याकुल है। अन्त में जब मनु कैलास स्थित सरोवर के तट पर स्वयं को प्रकृति—लीन कर लेता है तो अणु—अणु में आनन्द का सागर लहराता प्रतीत होता है। हम स्वयं व्यावहारिक दृष्टि से, प्रकृति की रमणीय स्थली में रम जाने पर आंतरिक उल्लास करते हैं—

चिर मिलित प्रकृति से पुलकित
वह चेतन पुरुष पुरातन;

निज भक्ति तरंगायित था
आनन्द अंबुनिधि शोभन।

सुख दुख के समन्वय का आख्यान कामायनी में अनेकत्रा हुआ है। यथा—

दुख की काली रजनी बीच
विकसता सुन्दर नवल प्रभात

द्वन्द्व ही दुख है और द्वन्द्व से तटस्था सुख।

बुद्धि और हृदय का द्वन्द्व मनु को निरन्तर भटकाता है। वह श्रद्धा (हृदय) तथा इड़ा (बुद्धि) के कारण झूलता भटकन का पात्रा बन जाता है। श्रद्धा से प्रथम मिलन के उपरांत उसके जीवन में जब स्थिरता आने लगती है तो वह हृदय और मस्तिष्क में समरसता न रख पाने के कारण कुटिया से बाहर वन में भटकने से कुप्रवृत्तियों में ग्रस्त हो जाता है। 'काम' उसे ठीक ही प्रताड़ित करता है—

मस्तिष्क हृदय के ही विरुद्ध,
दोनों में हो सद्भाव नहीं;
वह चलने को जब कहे कहीं,
तब हृदय विकल चल जाय कहीं।

हृदय और बुद्धि के सामंजस्य की आवश्यकता बताते हुए श्रद्धा अपने पुत्रा से कहती है—

यह तर्कमयी, तू श्रद्धामय,
तू मननशील कर कर्म अभय;
इसके तू सारे संताप निश्चय
हर ले, हो मानव भाग्य उदय,
सब की समरसता का प्रचार,
मेरे सुत! सुन मां की पुकार।

आकांक्षा और तृप्ति का द्वन्द्व एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है। मन में आकांक्षाए उत्पन्न होती हैं। उन्हें बलपूर्वक, अस्वाभाविक रूप से दमित किया जाएगा तो उसकी प्रतिक्रिया विस्फोटक हो सकती है। अभिलाषा और पूर्ति का प्रयास — दोनों में समन्वय अपेक्षित है—

हम भूख—प्यास से जाग उठे;
आकांक्षा—पूर्ति समन्वय से।

अधिकार और अधिकारी का द्वन्द्व कामायनी में दो रूपों में दिखाया गया है; एक मनु अपने अधिकार में गर्भवती श्रद्धा की उपेक्षा कर दीर्घाग्रस्त हो चला जाता है; दूसरे—सारस्वत प्रदेश में वह अधिकार चूर होकर प्रजा और उसकी रानी इड़ा पर वलात् अपनी मनचाही थोपना चाहता है। दोनों स्थिति में कामायनी सामंजस्य का संदेश देती है—

(क) तुम भूल गये पुरुषत्व मोह में
कुछ सत्ता है नारी की;
समरसता है सम्बन्ध बनी,
अधिकार और अधिकारी की।

इच्छा क्रिया—ज्ञान की विषमता और उन में सामरस्य स्थापित होने पर आनन्द की वर्षा का प्रसंग और दार्शनिकता के संदर्भ में भलीभांति स्पष्ट किया जा चुका है।

इस प्रकार कामायनी के आद्योपान्त, विभिन्न प्रसंगों, घटनाओं और स्थितियों के माध्यम से समरसता का महत्व प्रतिपादित किया गया है।

1.3.5 कामायनी की सांस्कृतिक चेतना :

संस्कृति का सम्बन्ध मनुष्य के संस्कारों, अर्थात् उसके स्वभाव, आचार—विचार, जीवन—दर्शन, सौंदर्य—परक, आस्था—विश्वास आदि से है। ये सभी मानव के अन्तर्गत के विषय हैं जो अवसरानुसार उसके व्यावहारिक विश्व में प्रतिफलित होते हैं। इस दृष्टि से सांस्कृतिक चेतना का सम्बन्ध भी मूलतः दार्शनिकता से जुड़ा है।

सांस्कृतिक चेतना का अभिप्राय है—मानवीय जीवन मूल्यों की उदात्तता प्रदान करने वाली प्रवृत्तियां। इस दृष्टि से कामायनी, निस्सन्देह, मानव—मर्यादाओं और मान्यताओं का काव्य है। ये मानव मर्यादाएं और परम्पराएं अधिकांशतः भारतीय संस्कृति की देन है। जलप्लावन (प्रलय) की घटना और तदुपरान्त सृष्टि के उदय की गाथा यद्यपि विश्व की अन्य संस्कृतियों में भी किसी न किसी रूप में प्रचलित रही है; किन्तु भारतीय संस्कृति में यह गाथा मात्रा घटना न होकर, मानव—समुदाय के सांस्कृतिक विकास की क्रमिक परम्परा प्रस्तुत करता है। इसके प्रमुख सोपान है—प्रकृति और पुरुष का तादात्म्य, आशा और आस्था, कर्म और भोग को समन्वय सुख—दुख से तटस्थता, सर्वमंगल, भौतिकता और नैतिकता का समन्वय इत्यादि। कामायनी में मनु मानवमन का प्रतीक है। श्रद्धा उस मानव—मन को सांस्कृतिक चेतना अर्थात् नैतिक उदात्तता की ओर अग्रसर करने वाली आन्तरिक निष्ठा, आस्थामयी शक्ति है जो श्रद्धा, दया, ममता, करुणा, सेवा, ममता, विश्वास की प्रतीक है। इड़ा पाश्चात्य संस्कृति के अति भौतिकवादी तन्त्रा की प्रतीक है जो केवल अधिकार, पद—लिप्सा, स्वत्व भोग, यांत्रिाक विकास को महत्व देता है। काव्य के शुरू में श्रद्धा का आगमन, भारतीय संस्कृति के पदार्पण का सूचक है जिससे आशा का आलोक फैलता है, विनाश के वातावरण में भी जीवन की उमंग की आस्था पनपती है। मनु द्वारा अन्तः वृत्तियों के उदात्त स्वरूप की उपेक्षा कर, केवल बाह्य सुख—भोग की प्रतीक उसे श्रद्धामयी संस्कृति से दूर कर देती है। मांस—मदिरा, जीव—हिंसा, अकर्मण्यता, स्वार्थ—लिप्सा, ईर्ष्या आदि के वश हो उसकी नैतिक चेतना कुंठित हो जाती है। उस पर यन्त्रा—विज्ञान का वरदान प्राप्त कर वह अपने भीतर की मानवता तक से अपरिचित बन जाता है। यह संस्कृति—विमुखता का परिणाम है जिसका साकार रूप विद्रोह, संघर्ष, युद्ध, तपाक (आवेश) अशांति में दिखाई देता है। इन आघातों से लहुलुहान मनुष्य पुनः सर्वात्मवाद, समन्वय, सर्वसुख—कामना आदि के उदात्त विचार जागृत होते हैं तब जीवन में शांति, स्थायी—शाश्वत आनन्द का संचार होता है। इस प्रकार कामायनी के कथा—सूत्रा प्रकारान्तर से रहस्य की एक विशिष्ट सांस्कृतिक चेतना के परिचायक हैं। यह विशिष्ट सांस्कृतिक चेतना निराशा को आशा, हिंसा को प्रेम में, स्वार्थ को परमार्थ में, ईर्ष्या को सहृदयता में, वासना को संयम में तथा कोरे ज्ञान को नैतिक आचार—व्यवहार में परिणत कर देने वाली अन्तश्चेतना का प्रतिरूप है मनु अल्प समय में सुख भोग लेना चाहता है, बाह्य साधनों का अधिकारिक उपभोग उसे जीवन का एकमात्रा लक्ष्य प्रतीत होता है।

(क) मैं उसको निश्चय भोग चलूं
जो सुख चलदल सा रहा डोल।

(ख) तुच्छ नहीं अपना सुख भी,

श्रद्धे वह भी कुछ है;
दो दिन के इस जीवन का तो
वही चरम सब–कुछ है।

यही मनोवृत्ति उस आधुनिक मानव की है जो उदात्त नैतिक मूल्यों में निहित सांस्कृतिक चेतना को भूल कर, भौतिक सुख–स्वार्थ का दास बन रहा है, इसी से वर्ग–भेद बढ़ रहा है–

वह विज्ञानमयी अभिलाषा, पंख लगा कर उड़ने की
जीवन की असीम आशायें, कभी न नीचे मुड़ने की,
अधिकारों की सृष्टि और उनकी वह मोहमयी छाया,
वर्गों की खाई बन फैली कभी नहीं जो जुड़ने की।

इस प्रकार के बाह्य साधनों की विपुलता मानव–जाति को छोटे–छोटे वर्गों (शासक–शासन, धनी–निर्धन, उच्च–नीच आदि) में बांटने का कारण है। कलह–द्वन्द्व तीव्र हो जाते है, वांछित सुख का ईर्ष्या–वैर–जन्य खेद ले लेता है। कवि के अनुसार नैतिक मूल्यों को पहचानने पर ही इन सब से निजात पाई जा सकती है–

''जड़ चेतनता की गांठ वहीं सुलझन है भूल सुधारों की
वह शीतलता है शांतिमयी जीवन के ऊष्ण विचारों की।''

1.3.6 रूपक तत्व :

कामायनी एक महाकाव्य है। यदि इसके नाट्य रूपांतरण को मंच पर प्रस्तुत किया जाए तब आरोपण का उपुर्यक्त रूप सामने आएगा। जो भी अभिनेता कामायनी के पात्राों–मनु, श्रद्धा, इड़ा का अभिनय करेगा वह प्रथमतः अपने पर इन पात्राों को आरोपित करेगा। फिर इन पात्राों के माध्यम से किन्हीं अन्य पात्राों की संकेत रूप में व्यंजित करेगा। अतः कामायनी में मूलतः तो इकहरा आरोपण ही है। इसमें मुख्य पात्रा–मनु, श्रद्धा, इड़ा केवल इकहरे पात्रा ही नहीं है। वे वैदिक और पुराणकालीन पात्रा ही नहीं है। वे सामान्य पात्रा ही नहीं हैं, प्रत्युत अपने से आगे फैले हुए हैं। जो वे हैं उससे भी अधिक उनका विस्तार हुआ है। वे जो प्रत्यक्षतः हैं, अप्रत्यक्षतः उससे भी कहीं अधिक है। वे अपने से बाहर और क्या है? निश्चित ही उन्होंने अपने पर अतिरिक्त किसी और को भी ओढ़ा हुआ है। उनके व्यक्तित्व पर किसी और का व्यक्तित्व भी आरोपित है। जो उन पर आरोपित है, जो उन्होंने ओढ़ा हुआ है, वे उससे अभेद हो चुके हैं। एकात्म, एकप्राण और एक रूप हो चुके हैं। वे अपने साथ–साथ जिसे अपने पर आरोपित किया है उसे भी जीते हैं। अतः कामायनी में प्रत्येक पात्रा एक रूपक योजना के अन्तर्गत जीवन जीता है। उसका दोहरा आचरण है। एक प्रत्यक्ष आचरण पौराणिक कथा के अनुरूप है। दूसरा अप्रत्यक्ष समकालीन जीवन के रूप में। इस सन्दर्भ में श्री जयशंकर प्रसाद का निम्नलिखित वक्तव्य द्रष्टव्य हैं:–

''इसलिए मनु, श्रद्धा, इड़ा, इत्यादि अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। मनु अर्थात् मन के दोनों पक्ष, हृदय और मस्तिष्क का संबंध क्रमशः श्रद्धा और इड़ा से भी सरलता से लग जाता है। इन्हीं सब के आधार पर कामायनी की कथा–सृष्टि हुई है........''

श्री प्रसाद के उपर्युक्त वक्तव्य के आलोक में कामायनी की रूपक योजना स्वतः ही स्पष्ट होने लगती है। इस योजना की मुख्यतः दो दिशाएं रही हैं–

— पात्रों में रूपक—योजना।

— घटनाओं में रूपक—योजना।

पात्रों में रूपक—योजना :

कामायनी में मुख्यतः तीन पात्रा हैं — मनु, श्रद्धा, इड़ा। इनके अतिरिक्त मानव भी है। किलात का प्रसंग भी महत्वपूर्ण है। इन सब का रूपक—योजना में अपना—अपना वर्णन है।

मनु का एक व्यक्तित्व वह है जो वे पुराण—गाथा में जीते हैं। परन्तु उसके साथ—साथ वह मन के आचरण का भी अपने पर आरोपण करते हैं। मन की विविध स्थितियों, क्रियाओं प्रतिक्रियाओं, आंदोलित अवस्थाओं की मनु के चरित्रा से विशद व्यंजना होती है। इसी प्रकार श्रद्धा अथवा कामायनी अपने चरित्रा पर परोक्ष में हमारी श्रद्धा के अमूर्त रूप का आरोपण करती है। मन के संसर्ग में आकर श्रद्धा कैसे मन को संबल देती है। मनु की पंगु स्थिति में उसके लिए एक महित प्रेरणा बन कर आती है। जब मन अपने भंयकर शब्दों में पक्षाधात पाता है तब श्रद्धा ही उसे नव—चेतना, शक्ति और दिशा देती है। वह उसे जीवन के संस्कृति और मंगलमय मार्ग पर प्रशस्त करती है। यही स्थिति इड़ा की भी है। वह अपने कथागत व्यक्तित्व के अमूर्त आचरण का आरोपण करती है। अपने चरित्रा के साथ—साथ वह मन, श्रद्धा के प्रसंग में भी भूमिका को भी व्यंजित करती है। जीवन के श्रद्धा—लोक से भागा हुआ मन बुद्धि के प्रपंचमय जाल में आकर उलझता है। कैसे वह जीवन की मृग छलनाओं के पीछे श्रद्धा—विहीन होकर भागता है और अन्त में औंधे मुंह गिरता है। तब पुनः श्रद्धा मन को अवलंब देती है। उसे अपने श्रद्धामय अचंल में शरण देती है। भगवान के प्रति उसके मन मे आस्था, विश्वास जगाती है। मन पर बुद्धि के अंध—शासन को एक संतुलित आहार प्रदान करती है। उसे जीवन के आनन्दमार्ग पर अग्रसर करती है। समरसता के तीर्थ का पुण्यलाभ भी करवाती है। श्रद्धा के ही योगदान से मानव मन में बुद्धि के प्रति एक समुचित संस्कार जगता है। जब व्यक्ति अपनी बुद्धि को श्रद्धा—युक्त बना कर, ज्ञान क्रिया, इच्छा में सामंजस्य स्थापित करेगा तभी उसके मन में आनंद का मानसरोवर प्रगट होगा। इसी प्रकार मन जैसे ही श्रद्धा से विमुख होगा आसुरी प्रवृत्तियां श्रद्धा से और भी दूर ले जाएंगी। उनके प्रलोभनों में मन भयंकर संघर्ष और विनाश की ओर जाएगा। यहां तक कि रचना में आनंदमार्ग पर जाते हुए जिस बैल का वर्णन मिलता है वह भी इस रचना की योजना का एक अतीव महत्वपूर्ण अंग है। वह केवल एक सामान्य बैल ही नहीं है। वह अपने पर एक अमूर्त व्यक्तित्व को ओढ़े हुए है। वह अपने साथ—साथ धर्म के स्वरूप की भी व्यंजना करता है।

इस प्रकार कामायनी के सभी प्रमुख एवं गौण पात्रा इस रचना की विशद रूपक—योजना में योगदान देकर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और अपने साथ—साथ एक और कथा के विकास में योगदान देते हैं। किन्हीं अन्य अमूर्त चित—वृत्तियों को प्रत्यक्ष करते हैं। रचनाकार का शिल्प—कौशल इस बात में है कि कहीं कथा के मूल पात्रा उन अमूर्त वृत्तियों से अलग प्रतीत नहीं होते हैं, जिनका उन पर आरोपण हुआ है। इस प्रकार रूपक—योजना के लिए जो अपेक्षाएं अनिवार्य रही हैं, रचनाकार ने बड़ी ही दक्षता से उनका विकास और सुनियोजन किया है।

घटनाओं में रूपक—योजना :—

कोई भी रूपक—योजना तब तक न केवल अपूर्ण ही रहती है प्रत्युत अशिल्पात्मक भी लगती है जब तक रूपक का आरोपण पात्रों के साथ—साथ रचना की प्रमुख घटनाओं में न हो। इस दृष्टि

से प्रस्तुत रचना की प्रमुख घटनाओं में रूपक की अमूर्त चेतना का अभेद आरोपण हुआ है। कामायनी की कतिपय प्रमुख वृत्तियां इस प्रकार हैं।

– देवताओं में वैलासिकता और परिणाम स्वरूप खंड प्रलय।
– मनु और श्रद्धा मिलन।
– आसुरी प्रवृत्तियों के संसर्ग में श्रद्धा से विमुखता।
– मनु का पलायन।
– इड़ा से भेंट और नवराज्य की संरचना।
– इड़ा पर अनाधिकार आधिपत्य और भयंकर संघर्ष।
– सारस्वत नगर का संघर्ष।
– मनु का पुनः पलायन।
– श्रद्धा और मनु की पुनः भेंट।
– इड़ा और मानव का सांकेतिक अनुबंधन।
– मानसरोवर की यात्राा।
– त्रिापुर लोक का वर्णन।
– सारस्वत नगर की जनता की यात्राा।
– मनु के दर्शन।

इन समस्त घटनाओं का कामायनी की कथा में, उसके विकास में और मूल कथ्य के निवेदन में विशेष महत्व रहा है। वे एक स्वतंत्रा कथा के सक्रिय अंग हैं। परन्तु अपने कथागत अर्थ के साथ–साथ ये घटनाएं और गंभीर अर्थ द्योतन भी करती है। समकालीन मानव की विविध विसंगतियों की प्रखर व्याख्या उनमें निहित है।

जब मानव विलासांध हो जाता है तब उसके जीवन में एक प्रलय आती है। यह प्रलय उस विलासिता के अनुपात में ही आएगी। वह खंड प्रलय हो सकती है और पूर्ण प्रलय भी। तब वह एकाकी पड़ जाएगा। ऐसे में दुश्चिन्ताओं के नागदंश उसे मूर्च्छित करने लगते हैं। तब वह अपने को एक करने के लिए किन्हीं सुकर्मों में स्वयं को नियोजित करता है। ऐसे में उसके भीतर ही श्रद्धा का उदय होता है। श्रद्धा के सम्पर्क में उसके अनियंत्रिात जीवन में एक सुनियोजन आता है। जीवन की एक दिशा उसे मिलती है। परन्तु पुनः आसुरी वृत्तियों के संपर्क में आने पर वह विलास–प्रिय हो उठता है। परिणामतः वह श्रद्धा विमुख हो जाता है। अंततः उससे पलायन कर बुद्धि की शरण में जाता है। वहां उसके संचालन में वह एक बार एक राज्य का नियमन तो कर लेता है, परन्तु श्रद्धा–शून्य होने के कारण उसमें विवेक लुप्त होने लगता है। इसी विवेक–शून्य मनः स्थिति में वह बुद्धि पर अनाधिकार आधिपत्य करना चाहता है। परिणामतः जीवन में एक भयंकर संघर्ष का सूत्रापात हो जाता है। तब मनु पुनः वहां से पलायन करता है। पुनः श्रद्धा भेंट होने पर उसे नव–जीवन की दिशा मिलती है। वे दोनों मानव और बुद्धि में परस्पर अनुबंध स्थापित स्वयं मानसरोवर की यात्राा पर अग्रसर हो जाते हैं। मार्ग में त्रिापुर–लोक के प्रसंग में ज्ञान–क्रिया इच्छा सामंजस्य का आनन्ददायक मर्म उद्घाटित होता है। तभी मनु के राज्य की जनता उसके दर्शन से परमार्थ को प्राप्त करती है। जन–जन के जीवन में समरसता का स्त्रोत प्रवाहित होने लगता है। इसी कथा का मूल–भाव अपने पर अभेद रूप में आरोपण करती है। यही कथा के रूपक का मर्म है।

1.3.6.1 स्वयं जांच अभ्यास

1.	कामायनी के दर्शन पर विचार लिखें।
	....
	....
	....

1.3.7 सारांश

युग द्रष्टा जयशंकर प्रसाद ने अपने युग की अतिबौद्धिकता से उत्पन्न होने वाली अशांति और अराजकता को समाप्त करने के लिए कामायनी में दर्शन, समरसता, सांस्कृतिक चेतना और रूपक तत्व को रेखांकित किया है। उन्होंने व्यक्ति की महत्वाकांक्षाओं के दुष्परिणामों से परिचित करवाते हुए उसे एक नई दिशा दी है।

1.3.8 प्रश्नावली :

1. जयशंकर प्रसाद की काव्यकला पर विचार करें।
2. छायावादी काव्यधारा में प्रसाद के योगदान पर प्रकाश डालें।
3. 'कामायनी' में मानव जीवन की समस्याओं को उभरा गया–समीक्षा कीजिए।
4. लज्जा सर्ग के महत्त्व को प्रतिपादित करें।
5. कामायनी के रूपकत्व पर विचार करें।

1.3.9 सहायक पुस्तकें

1. प्रसाद काव्य कोष : सुधाकर पांडेय
2. कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन : डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना
3. प्रसाद का काव्य : प्रेम शंकर

पाठ संख्या : **1.4** लेखिका : डॉ. कुलदीप कौर

निराला का काव्य सौष्ठव

इकाई की रूपरेखा

1.4.0 उद्देश्य
1.4.1 प्रस्तावना
1.4.2 व्यक्तित्व और कृतित्व
1.4.3 निराला का काव्य सौष्ठव
1.4.4 कविताओं का परिचय
1.4.4.1 स्वयं जांच अभ्यास
1.4.5 सारांश
1.4.6 प्रश्नावली
1.4.7 सहायक पुस्तकें

1.4.0 उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ में आप निराला की साहित्यगत विलक्षणताओं के विषय में जान पाएंगे। उनके काव्य में अभिव्यक्त छायावादी, प्रगतिवादी और क्रांतिकारी प्रवृत्तियों को भी समझने में सक्षम हो पाऐंगे।

1.4.1 प्रस्तावना :

आधुनिक हिन्दी कविता के तृतीय सोपान छायावाद के प्रमुख स्तंभ प्रगतिवाद, प्रयोगवाद व नई कविता के जनक, क्रांतिधर्म, संघर्षशील, मानवीय गौरव, समता विवेक में अटूट आस्था रखने विद्रोही कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला हिन्दी कविता में प्रमुख स्थान के अधिकारी हैं। छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के जनक होकर भी वह किसी वाद विशेष में बंध कर न चले। उन्होंने केवल मनुष्य को अपने काव्य का विषय बनाया और उसी के अभावों–संघर्षों को अभिव्यक्ति दी। इसी अर्थ में वे हिन्दी के प्रथम प्रगतिवादी कवि माने जाते हैं। इनका काव्य विभिन्न विरोधी प्रवृत्तियों को आत्मसात् करता हुआ राग–विराग के द्वन्द्व के भाव और कला दोनों स्तरों पर व्यंजित करता है। इनके काव्य में यदि एक ओर विलास है तो दूसरी ओर मृत्यु की शांति, एक ओर क्रांति है तो दूसरी ओर प्रपत्ति (पूर्ण समर्पण), एक ओर प्रकृति–प्रेम तथा नारी–सौंदर्य के चित्रा हैं तो दूसरी ओर सामाजिक क्रांति के, एक ओर अंधकार का वर्णन है तो प्रकाश का भी अभाव नहीं है। इस संबंध में विश्वनाथ प्रसाद तिवारी लिखते हैं कि, ''निराला के काव्य में अंधकार अपने विविध रूपों में बार–बार आता है पर अंधकरा और कुछ नहीं है सिवा उनके जीवन संघर्षों के।''

1.4.2 व्यक्तित्व और कृतित्व :

निराला काव्य में उनके संघर्षमयी जीवन की अभिव्यक्ति हुई है। उन्होंने केवल कविता ही नहीं लिखी वरन् उसे जीया भी है। उनके जीवन में दार्शनिकता, समर्पण और करूणा की जो प्रवृत्तियाँ व्यक्त हुई वे उनके जीवन की ही अभिव्यक्तियाँ है। परवर्ती रचनाओं में सामाजिकता और आर्थिक वैषम्य के प्रति जो आक्रोश और व्यंग्य मिलता है उसमें अनके जीवन संघर्षों की ही झलक मिलती है। परिणामतः कवि का जीवन विविध विडम्बनाओं का भवंडर ही कहा जाएगा। निराला के साहित्य को इन जीवन संघर्षों से पृथक करके नहीं समझा जा सकता।

जीवन संघर्षः— गरीब ब्राह्मण परिवार में जन्म लेकर बचपन में ही माता की मृत्यु और पिता के कठोर अनुशासन ने कवि की सहन क्षमता और कठोरता में अभिवृद्धि की। आयु विकास के साथ—साथ उनके व्यक्तित्व में अखड़पन और लापरवाही आदि का संचार बढ़ता गया और शिक्षा में पिछड़ कर वह संगीत, कुश्ती और घुड़सवारी के शौकीन हो गए। फलतः तन के कठोर, मन के करूण कोमल, निराला कृतित्व में विरोधी प्रवृत्तियाँ पनपती रही। निराला सदा 'निराला' ही रहे।

सुसंस्कृत साहित्यनुरागिनी पत्नी मनोरमा देवी का साथ भी अधिक देर तक नहीं मिल पाया। 21 वर्ष की आयु में पत्नी का देहान्त, तदपुरांत पिता, चाचा तथा अन्य पारिवारिक सदस्यों का एक के बाद एक करके चले जाना और अंत में बेटी सरोज की मृत्यु जो उनके जीवन का रसात्मक सूत्रा थी, का उन्नीस वर्ष की आयु में निधन जीवन में निराशा और रिक्तता भर देता है। उनकी रचनाओं में इसी जीवन—संघर्ष का चित्राण मिलता है।

रचनाएँः— अनामिका (1923), परिमल (1930), गीतिका (1936), कुकुरमुत्त, अणिमा, बेला, नए पत्ते, अर्चना, आराधना, गीत कुंज, सांध्य काकली, अपरा, दो शरण, राग विराग

1.4.3 निराला का काव्य—सौष्ठवः— निराला लेखन में सचमुच निराला थे। इनकी कथ्य—विविधता तथा शिल्प नवीनता इन्हें पृथक बनाती है। इन्हें एक साथ महाप्राण, काव्यपुरूष, प्रौढ़शिल्पी, प्रयोग—धर्मी, विराट—चेतना, मुक्त छन्द का प्रणेता, कोमल एवं कठोर भावनाओं का कवि स्वीकारा गया है। इनकी कविताएँ छायावादी, प्रगतिवादी प्रयोगवादी, रहस्यवादी सभी तरह की है। इनहोंने अपनी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना, भक्ति—भावना, सामाजिकता, भारतीय संस्कृति तथा भारतीय दर्शन की काव्यात्मक प्रस्तुति है। इसलिए उनका काव्य भाषा एवं शैली सभी दृष्टियों से निराला है। डॉ. बच्चन सिंह ने निराला को क्रांतिकारी और प्रयोगधर्मी कवि मना है।

सामाजिक, राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक पीढ़िकाः— छायावाद के मूल में वैयक्तिक एवं सामाजिक असंतोष की भावना मानी जाती है। वस्तुतः जीवन के प्रति दृष्टिकोण बदल रहा था। प्राचीन रूढ़ियों और व्यर्थ के नैतिक बंधनों ने नवयुवकों की अन्तरचेतना को कुंठित कर रखा था। प्राचीन परम्परागत विवाह सम्बन्ध प्रेम की आन्तरिक उमंग पर आधारित नहीं था। पाश्चात्य सभ्यता और शिक्षा के प्रभाव से नव कवि उन्मुक्त प्रेम के अभिलाषी बनने लगे थे। समाज की गली—सड़ी रूढ़ियों से उन्हें रूढ़ियों से उन्हें चिढ़ थी। अतः उनका मानसिक असंतोष कविता में प्रकट होने लगा। विदेशी ब्रिटिश सरकार का दमनचक्र भी प्रबुद्ध वर्ग के मानस पर निराशा की काली छाप लगा रहा था। निराला का जीवन व काव्य इसी व्यथा की कहानी है—

तुम हो महान, तुम सदा हो महान

है नश्वर यह दीन भाव
कायरता, कामपरता।
ब्रह्म हो तुम
पद–रज–भर भी है नहीं
पूरा राह विश्व–भार
जागो फिर एक बार।

इसके माध्यम से वे समाज को सुप्त अवस्था से जगाकर चेतन करना चाहते हैं।

दार्शनिकता:– निराला के काव्य में दार्शनिकता का गूढ़ चिन्तन भी किया गया है। स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, रवि बाबू एवं गांधी जी ने छायावादी काव्य के लिए दार्शनिक भूमिका निर्मित कर दी थी। निराला काव्य में अध्यात्मिक भावना और मानवतावाद का आधार अद्वैत दर्शन है। निराला का मानना है कि जीव संसार में माया के भ्रमजाल में फंसकर अपने वास्तविक रूप को भूल जाता है, माया ही भ्रम उत्पन्न करती है। माया का आवरण हटाने पर ही जीव और ब्रह्म एकाकार हो जाते हैं पर उस तादात्म्य प्राप्ति के लिए जीव को अनेक सोपान भी पार करने पड़ते हैं जैसे कि–जिज्ञासा, आस्था, अद्वैत भावना, विरह का अनुभव इत्यादि। निराला की दार्शनिकता का एक उदाहरण देखिए–

उसके बाग में बहार देखता चला गया।
कैसे फूलों का उभार देखता चला गया।।
टूटी भेद की दीवार देखता चला गया।

रहस्य भावना:– रहस्यवादी कवियों में निराला का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अन्य कवियों ने तो रहस्यवाद की कल्पनाएँ ही की हैं किन्तु निराला के काव्य का मेरूदण्ड ही रहस्यवाद है। उनके अधिकांश पदों में भले ही मानवीय जीवन के चित्रा देखने को मिलते हैं परन्तु वे सब के सब रहस्यानुभूति से ही अनुरंजित हैं। जैसे सूरदास के अधिकांश पद श्रीकृष्ण की लोक लीला से सम्बद्ध होते हुए भी अध्यात्म की ध्वनि से आपूरित हैं, वैसे ही निराला के पद हैं। आत्मा के परमात्मा के लिए अभिसार, मिलन और वियोग आदि की सजीव अभिव्यक्ति इन्होंने की है। अज्ञात सत्ता के प्रति जिज्ञासा का निम्नलिखित भाव देखिए–

हृदय में कौन जो छेड़ता बासुरी?
हुई ज्योत्सनामयी अखिल मायापुरी

शृंगारिकता :– शृंगारिकता छायावादी काव्यधारा का एक प्रमुख तत्त्व है। छायावाद की अन्तवृर्ति अप्रत्यक्ष शृंगार के रूप में व्यक्त हुई है। छायावादी कवियों ने एक ओर प्रकृति पर नारी भावना का आरोप किया है और दूसरी ओर नारी की आत्मा के सौन्दर्य का भी चित्राण किया है। निराला की कविता में ये दोनों ही प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। प्रकृति पर नारी भाव का आरोप 'जूही की कली' में देखने योग्य है:

विजन–वन–वल्लरी पर
सोती थी सुहाग भरी
स्नेह स्वप्न मग्न–अमल–कोमल–तनु तरूणि

जूही की कली

दृश बन्द किये शिथिल, पंत्राक में

संकीर्णता का विरोधः– आत्मप्रसार की भावना ने कवि को केवल परिवार की चार दीवारी तक ही सीमित नहीं रहने दिया अपितु उसे चारवारी पर प्रहार करने के साथ–साथ जीवन के सभी क्षेत्रों में संकीर्णता का विरोध करने के लिए प्रेरित किया। धन का उद्‌बोधन करते हुए निराला कहते हैं कि –

ताल–ताल से रे सदियों के जकड़े हृदय–कपाट

खोल दे कर कठिन प्रहार

आये अभ्यंतर संयत चरणों से नथ्य विराट

करे दर्शन, पाये आभार

प्रवृतिमूलक :– आधुनिक कवि निराला संसार को सत्य और वास्तविक मानकर चले हैं। समस्त विश्व उन्हें सुन्दर प्रतीत होता है। इसी के साथ ही वह अपना रागात्मक प्रसार कनते हैं। निराला ने विश्व के सौन्दर्य और सत्य का साक्षात्कार करवाया है। यद्यपि निराला कुछ मायावाद की ओर भी झुके हैं किन्तु व्यवहारिक रूप में वह जगत की सत्यता को सदैव मानते रहे हैं। 'माया है सब माया है' कहने वाला कवि जीव की महानता का ही ज्ञान कराना जाहता है

मुक्त हो सदा ही तुंग, बाधा–विहीन बंध छन्द ज्यों,

डूबे आनन्द से सच्चिदानन्द रूप।

दुःखवाद :– निराला को सामाजिक एवं वैयक्तिक व्यथा ने दबाया हुआ था। उनके जीवन काल में पग–पग पर इतने दुःख आए हैं कि निराला की कविताओं में व्यथा, वेदना, संघर्ष और दुःखवाद का स्वर गूंज उठना स्वाभाविक ही था। इसीलिए दुःखवाद निराला के काव्य का एक प्रमुख तत्त्व बन कर उभरा है। निराला तो अंत तक यही कहते रहे कि–

दुःख ही जीवन की कथा रही,

क्या कहूँ आज जो नहीं कही।

दुःख और करूणा को निराला ने ऐसा तत्त्व बना दिया जो जीवन को मरूस्थल नहीं अपितु उर्वर कुसुम बनाता है।

नवयुग का आह्रन :– निराला मानवतावाद को हरे–भरे परिधान में देखना चाहते थे। नवयुग में प्राचीन मृतप्राय और गली–सड़ी सामाजिक परम्पराओं को तो वे कैसे सहन करते? इसी से प्रायः निराला ने प्राचीन जीर्ण–शीर्ण रूढ़ियों को मृत्यु दण्ड दिया है। निराला अपनी 'उद्‌बोधन' कविता में कहते हैं–

गरज गरज घन अंधकार में गा अपने संगीत

बंधु ने बाधा–बंध विहीन

आँखों में नव जीवन की तू अंजन लगा पुनीत

बिखर झर जाने दे प्राचीन।

राष्ट्रीयता :– निराला की छायावादी कविताओं मे राष्ट्रीयता की भावना भी है और उन्होंने राष्ट्रीय प्रभाती के रूप में उद्‌बोधन गीत भी लिखे हैं, जिनमें छायावाद की पूरी कोमलता एवं चित्रामयता दृष्टिगोचन होती है। निराला की भारती वेदना में भारत–लक्ष्मी का सूक्ष्म रेखाचित्रा भाव–सौन्दर्य विलक्षण रूप मे

व्यक्त है–

> सवा–सवा लाख पर
> एक को चढ़ाऊँगा
> गोविन्द सिंह निज
> नाम जब कहाऊँगा।

डॉ. भागीरथ मिश्र के अनुसार ''निराला की अधिकांश कविताओं में पृष्ठभूमि में राष्ट्रीयता का रंग विद्यमान मिलेगा।'' निराला की 'मातृभूमि की वन्दना', 'महाराजा शिव जी का पत्रा, 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' आदि कविताएँ इसी कोटि की हैं। पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध से ग्रस्त भारतीय गौरव को अपने ज्ञान गौरव का स्मरण दिलाते हुए निरला लिखते हैं–

> योग्य जन जीता है
> पश्चिमी की उक्ति नहीं
> गीता है, गीता है

सहानुभूति :– निराला का ऐसा मानना है कि प्रकृति मानव के प्रति सहानुभूति प्रकट करती है। निराला की कविताओं मे संवेदनशीलता का खूब वर्णन हुआ है। मानव भी अपनी संवेदना प्रकट करता है। निराला का हृदय प्रकृति के कष्टों को देखकर करूणा प्लावित हो जाता है। आलम्बन पुष्प के उन्मुक्त सौरभदान और मृदु मुस्कान पर रीझकर निराला को उसे धूल में मिलाने वाले माली और पुजारी पर क्रोध आता है–

> तुम्हारा इतना हृदय उदार
> वह क्या समझेगा माली निष्ठुर निरा गवाए।

'रास्ते के फूल' से महाकवि निराला ने और भी अधिक तादाम्य और सहानुभूति दिखाई है। प्रकृति के अनेक रूपों जैसे – 'सरिता', 'कण', 'तरंग' आदि से भी वे आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित करते प्रतीत होते हैं। तरंगों में विकलता और विह्वलता का अनुभव करता हुआ कवि उनसे प्रश्न करता है–

> क्यों तुम भाव बदलती हो
> हँसती हो कर मलती हो?

प्रगतिवादी चेतना एवं विद्रोही रूप :– कविवर सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला को यद्यपि छायावादी कवियों में स्थान दिया गया है तथापि उनकी रचनाओं में 'प्रगतिवादी' तत्त्व प्रचुरता से उपलब्ध होते हैं। 'मार्क्सवादी' विचारों की अभिव्यक्ति जब हिन्दी कविता में हुई तो उसे 'प्रगतिवाद' कहा गया। इस विचारधारा से अनुप्राणित कवियों ने सामाजिक विषमता पर आक्रोश व्यक्त किया, शोषण का विरोध किया, गरीबों एवं दीन असहाय व्यक्तियों की दीन–हीन दशा का चित्राण करते हुए उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त की, पूंजीपतियों की प्रवृत्तियों का विरोध किया एवं पुरानी सड़ी–गली रूढ़िवादिता को हटाकर नवीनता लाने का समर्थन किया। कविवर 'निराला' के काव्य में इन सभी प्रवृत्त्वियों का समावेश है। 'तोड़ती पत्थर' नामक कविता में एक ओर तो उस मजदूरनी का चित्राण है जो तपती दोपहरी में भरी में भारी हथौड़े से धूप में बैठी पत्थर तोड़ रही है, तो दूसरी ओर वे पूंजीपति हैं जिन्होंने छायादार पेड़ों को भी अपने भवन की चारदीवारी में कैद कर रखा है। शोषक वर्ग उस गरीब को इतनी सुविधा भी नहीं देता

कि वह पेड़ के नीचे बैठकर पत्थर तोड़ने का काम कर सके। इस स्थिति का निरूपण निराला ने निम्न पंक्तियों में किया है:

''वह तोड़ती पत्थर
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर।
नहीं छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार।''

इस कविता का मूल स्वर प्रगतिवादी चेतना से युक्त है। कवि यह बताना चाहता है कि श्रमिकों की कार्यदशाएं अत्यन्त शोचनीय हैं। जेठ की तपती दोपहर में धूप में बैठकर वह पत्थर तोड़ रही है जबकि पूंजीपति विलास के साधनों से सम्पन्न हैं।

इसी प्रकार निराला ने 'भिक्षुक' नामक कविता में एक गरीब भिखारी की दयनीय दशा का चित्राण किया है। उसके साथ बच्चे सड़क पर पड़ी जूठी पत्तलों को चाट रहे हैं–

वह आता
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।
पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चला रहा लकुटिया टेक
मुट्ठीभर दाने की – भूख मिटाने को
मुंह फटी–पुरानी झोली का फैलाता।

कवि की पूरी संवेदना उस भिक्षुक के साथ है। वे प्रश्न करते हैं कि इस सामाजिक विषमता रूपी चक्रव्यूह को कौन सा 'अभिमन्यु' तोड़ सकेगा? यदि कोई अभिमन्यु आगे आए तो मैं उसके समस्त दुःख स्वयं लेने को तैयार हूं। अभिमन्यु भले ही चक्रव्यूह में अकेला गया हो, पर मैं इस अभिमन्यु का साथ देने के लिए तैयार हूं।

कवि यह आकांक्षा करता है कि मां काली इस सामाजिक विषमतारूपी दैत्य का संहार करेगी। श्यामा का आह्वान करते हुए वे एक बार पुनः ताण्डव नृत्य करने के लिए आग्रह करते हैं जिससे विषमता का असुर नष्ट हो जाए तथा जगत में सर्वत्रा समता स्थापित हो सके। निराला की कविताएं–बादल राग, डिप्टी साहब आए, जागो फिर एक बार, सड़क के किनारे की दुकार–उद्बोधन परक हैं तथा वर्ग संघर्ष की प्रेरक हैं। 'बादल राग' में कृषकों की दीन–हीन दशा का चित्राण करने के साथ–साथ कवि ने क्रान्ति के प्रतीक बादलों का आह्वान इन शब्दों में किया है –

र्जीण बहु है शीर्ण शरीर
तुझे बुलाता कृषक अधीर
ए विलप्व के वीर।
चूस लिया है उसका सार
हाड़मात्रा ही है आधार

ए जीवन के परावार।।

इसी प्रकार निराला ने 'कुकुरमुत्ता' कविता में प्रतीकात्मक शौली में गुलाब और कुकुरमुत्ता की तुलना करते हुए सामाजिक विषमता को उजागर किया हैः

अबे सुन बे गुलाब

भूल मत, जो पाई खुशबू रंगों आब।

खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट

डाल पर इतरा रहा कैपेलिस्ट।

निराला की 'राम की शक्ति पूजा' में भी अन्याय और अत्याचार पर सत्य एवं न्याय की विजय दिखाई गई है। रावण जैसे दुष्ट, अत्याचारी एवं अन्यायी व्यक्ति आज भी हमारे सामाज में हैं जो किसी भी गृहलक्ष्मी को शक्ति के बल पर हरण करके, अट्टहास करते हैं। ऐसी स्थिति में असहाय व्यक्ति की आँखों से दो बूंद आंसू ही टपकते हैंः

फिर सुना हँस रहा अहास रावण खल–खल।

भावित नयनों से सजल गिरे दो मुक्ता दल।।

अन्याय और अत्याचार पर अन्तिम विजय न्याय एवं सत्य की ही होती है, राम की शक्ति–पूजा में कवि ने यही प्रतिपादित किया है। कविवर निराला उस सामाजिक विषमता के प्रति आक्रोश से भरे हुए हैं जिसमें कुछ लोग तो पूंजी के बल पर विलासिता भरा जीवन व्यतीत कर रहे हैं जबकि अधिकांश मजदूर एवं दीनहीन व्यक्ति जीवनयापन के लिए जी तोड़ परिश्रम करने के बावजूद पेटभर भोजन प्राप्त नहीं कर पाते।

निश्चय ही निराला ओज एवं औदात्य के कवि हैं। उनकी कविता आक्रोश एवं क्षोभ को अभिव्यथ्कत देती है। गरीब विधवा की दयनीय दशा देखकर वे सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर नवीन विचार का सूत्रापात करना चाहता हैं। उनका कवि हृदय विधवा की दयनीय दशा देखकर करूणा प्लवित हो उठता हैः

है करूणा रस से पुलकित इसकी आँखे।

देखा तो भीगी मन मधुकर की पांखें।।

मृदु रसावेश में निकला जो गुंजार।

वह और न था कुछ, था बस हाहाकार।।

अतः कहा जा सकता है निराला प्रगतिवादी विचारधारा के समर्थ कवि थे। इसीलिए डॉ0 रामविलास शर्मा जैसे प्रगतिवादी आलोचक ने उन्हें अपना आदर्श माना। निश्चय ही निराला का समग्र काव्य प्रगतिवादी विचारधारा का पोषक है।

भाषा :– निराला के काव्य में भाव तत्त्व के साथ भाषा का बहुत अन्तरंग सम्बन्ध हैं। भाव के साथ उनकी भाषा रक्त–स्नायु के साथ झिल्ली की तरह लिपटी हुई है। अतः स्फूरित भाव तथा विचार को प्रचलित प्रतीकों द्वारा मूर्त रूप न देकर स्फुट रूप में ही व्यक्त करने की स्पर्धा है, अतः निराला की भाषा सांकेलिक अधिक है। निराला ने सबसे पहले कम शब्दों में अधिक भाव व्यक्त करने का सफल प्रयास किया है; अतः उनकी भाषा सामास–बहुला हो गई है।

निराला की भाषा में तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। निःसुरभि विषण्ण, निःसृत, उच्छवास, सद्म, सक्षम,

श्लथ, समधीत, नीलालका, चिन्त्य, पुष्कल, कल्मषोत्सार, सौरभेत्कलित, व्यूह, प्रत्यूह आदि तत्सम शब्दों का उनके काव्य में डटकर प्रयोग हुआ है। तद्भव शब्दों की भी कमी नहीं है। मोर, सांप, मरजाद, पानी, सपना, बूंद, फूल, गोद, काँट, तिनका, बारम्बार, गरज, ओंठ, आसीस, मौत, चितवन, पपीहा, नारियल, आरती, गंगानहान, घोड़े, कहानी, तेल, हाथी, कछार आदि तद्भव शब्द हैं, जिन्हें निराला ने अपनी कविताओं में प्रयुक्त किया है। अरबी—फारसी शब्दों का भी प्रयोग निराला ने खुलकर किया है। उदाहरण के लिए जहाज, काफिर, पस्त, मर्द, शेर, गुलाम, दगाबाज, चमन, तहजीब, तरतीग, बाग, सुर्ख, आशियाँ, जुबाँ, सजीज, कबाब आदि शब्दों को लिया जा सकता है। इन विदेशी शब्दों का प्रयोग कवि ने अधिकतर वातावरण—सृष्टि के लिए किया है। निराला के काव्य में अंग्रेज़ी के भी पर्याप्त शब्द मिल जायेंगे। कारनेट, पैराशूट, लायर, रोमांस, कैपीटी, टेरियर, मेमोरियल, फालोवर, डिक्टेटर, पोइट्री, हैट, प्रोलेटैरियन, टार्च आदि ऐसे ही शब्द हैं।

छन्द :— निराला छन्द योजना की दृष्टि से भी क्रांतिकारी एवं विद्रोही कवि हैं। उन्होंने छनद सम्बन्धी प्राचीन मान्यताओं को आमूलचूल परिवर्तित करते हुए 'मुक्त छन्द' में काव्य सृजन प्रारम्भ किया जिससे कवियों की कविता लिखने में सरलता एवं स्वच्छन्दता का अनुभव हुआ। 'छन्द' की कारा से कविता को मुक्त करके निराला हिन्दी में मुक्त छन्द में कविता लिखने वाले पहले कवि कहलाए। यहां किसी प्रकार का कोई बन्धन तुक अथवा मात्राओं का नहीं है। 'परिमल' की भूमिका में मुक्त छन्द की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा —''मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बन्धन से छुकारा पाना है, कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाता है। ..., मुक्त काव्य कभी साहित्य के लिए अनर्थकारी नहीं होता, किन्तु उससे साहित्य में एक प्रकार की स्वाधीन चेतना फैलती है, जो साहित्य के कल्याण की ही मूल होती है।'' 'जूही की कली', 'सन्ध्या—सुन्दरी', 'जागो फिर एक बार', 'बादल राग', 'शेफालिका', 'बेला', 'कुकुरमुत्त' आदि कविताओं में मुक्त छन्द का ही प्रयोग हुआ है।

अतः जैसा कि इन्द्रनाथ मदान कहते हैं कि, ''इनके काव्य तथा व्यक्तित्व में दार्शनिकता की जिज्ञासा, रूप की लिप्सा, भक्त की विपल्वता, प्रेम की उत्कटता, क्रांति एवं विद्रोह की उग्रता, मानव की स्पर्धा, अहम् की महत्त्वकांक्षा, हृदय की दवर्णशीलता, बुद्धि की कुशलता, नायक की उदात्तता हिन्दी की सेवा प्रायणता के विविध तथा विरोधी स्वर ध्वनित होते हैं।''

इस प्रकार अपने युग की समस्त सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों और गतीविधियों का अवलोकन निराला ने अपनी खुली आँखों से किया था। उन्होंने अपने युग की इन परिस्थितियों का सही अध्ययन, मनन और चिंतन करके अपनी एक प्रगतिशील विचारधारा बनाई थी। एक सच्चे युग—चेता साहित्यकार के नाते ही निराला ने अपने युग के उच्च सांस्कृति तत्त्वों का निर्माण किया। सामाज को जागृत करना ही उनके काव्य का मुख्य उद्देश्य था। इन सबके आधार पर निराला का निरालापन दृष्टिगोचर होता है।

जागो फिर एक बार—बार

जागो फिर एक बार कविता निराला द्वारा रचित काव्य संग्रह 'परिमल' में संकलित है। प्रस्तुत रचना में कवि ने भारतवासियों को अतीत की गौरवमयी गाथाओं के माध्यम से गुलामी की जंजीरों को तोड़ने का संदेश दिया है। भारतीयों के मनोबल को ऊँचा उठाने के लिए कवि आर्यों की वीरता का गुणगान करता है किस प्रकार उन्होंने अपने बाहुबल से युद्धों में विजय प्राप्त की। इसके साथ ही कवि गुरु गोबिन्द सिंह

के अद्वितीय साहस, निडरता और बलिदान को स्मरण करता है। किस तरह गुरु गोबिन्द सिंह ने मृतः प्राय लोगों में साहस पैदा किया और सवा–सवा लाख से एक–एक को लड़ा दिया। कवि कहता है कि गुरु गोबिन्द सिंह युद्ध के मैदान में जब 'सत श्री अकाल' का उच्चारण करते तो उनके मस्तिष्क से निकलने वाली आग से दुश्मन का सब कुछ भस्म हो जाता था–

सत श्री अकाल,
भाल अनल धक–धक कर जला
भस्म हो गया था काल
तीनों गुण ताप त्राय
अभय हो गये न तुम।

वीरों की परम्परा की याद दिलाते हुए गीदड़ों की तरह जीने वाले भारतीयों शेर की भांति जी ने के लिए इस प्रकार प्रोत्साहित करता है :–

पशु नहीं, वीर तुम
समर–शूर, क्रूर नहीं
काल–चक्र में ही दबै
आज तुम राज कुँवर! समर सरताज!

राम की शक्ति पूजा

1936 में रचित कविता 'राम की शक्ति पूजा' में राम–रावण युद्ध का वर्णन किया। भाव और कला की दृष्टि से निराला की सर्वोत्कृष्ट रचना है। वीर और श्रृंगार के साथ–साथ निराशा जैसे भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई। भाषा का प्रयोग प्रसंगानुकूल है। कवि ने राम को परमब्रह्म न मानकर एक वीर पुरुष के रूप में चित्रित किया है। जो युद्ध में विजयी होने के लिए महाशक्ति की आराधना करता है। कवि ने राम के माध्यम से वैयक्तिक संघर्ष के साथ–साथ सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं को भी अभिव्यक्त किया है। गुलाम भारत की निराश जनता को प्रोत्साहित करने के लिए राम कथा के उस अंश को अंकित किया गया जो व्यक्ति की इच्छा शक्ति, एकाग्रताा और संगठन के महत्त्व को प्रतिपादित करता है। डॉ0 रामविलास शर्मा ने इसे 'एपिक क्वालिटी' बताते हुए लिखा है कि उन्होंने अपने जीवन की अनुभूति, निराशा, पराजय, संघर्ष और विजय कामना को नाटकीय रूप दिया है :–

धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध

कुकुरमुत्ता

कुकुरमुत्ता निराला द्वारा 1941 ई. में रचित व्यंग्यपरक कविता है, जिस का मूल स्वर प्रगतिवादी है। यह निराला के काव्य–संकलन 'नए पत्तों' मं संकलित है। निराला के काव्य विकास में 'कुकुरमुत्ता' भाव एवं शिल्प की दृष्टि से एक विलक्षण प्रयोग माना गया है। कुकुरमुत्ता के सन्दर्भ में निराला की प्रगतिशीलता की खोज और छान–बीन बार–बार की गई। अक्सर उनकी कविताओं को लेकर उन्हें कभी इस खेमे में तो कभी उस खेमे में डालने के प्रयत्न हुए हैं। सही अर्थों में निराला को किसी एक विचारधारा, वाद अथवा

काव्य–आन्दोलन में बांधा नहीं जा सकता। प्रयोग–धर्मिता इस कवि की पहचान है और 'कुकुरमुत्ता' रचना इस पहचान का अनुपम पक्ष है। दूधनाथ सिंह ने 'कुकुरमुत्ता' के प्रथम संस्करण और द्वितीय संस्करण में किए गए परिवर्तनों को आधार बना कर इस कथन की विवेचना सविस्तार की है कि सचमुच 'कुकुरमुत्ता' कवि की ऐसी पहचान कराता है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ कवि 'कुकुरमुत्ता' की उपयोगिता सिद्ध कर रहा है। यह एक व्यंग्य प्रधान रचना है परत्तु यह व्यंग्य कहीं भी घृणा का आवेश नहीं लेता।

गुस्सा आया, कांपने लगे नवाब
बोले, ''चल, गुलाब जहां थे, उगा
सबके साथ हम भी चाहते हैं अब कुकुरमुत्ता।''
बोला माली, ''फरमाएं मुआफ खता
कुकुरमुत्ता अब उगाया नहीं उगता।''

नवाब द्वारा 'कुकुरमुत्ता' की मांग किये जाने पर माली का कहना कि – कुकुरमुत्ता उगाए नहीं उगता, सच्चाई को प्रमाणिक करता है। साधारणतः सामान्य को पैदा नहीं किया जा सकता। वह अस्तित्व की सार्थकता में भी स्वयभू है, स्वतन्त्रा है। इस तरह निराला 'कुकुरमुत्ता' में एक क्रांतिदर्शी, कथा–कथित, प्रगतिशील कवि ही नही बल्कि एक सत्यदृष्टा कवि हैं। निराला ने 'कुकुरमुत्ता' में कहीं पर भी सपाट रूप में उपदेश नहीं दिया। भारतीय जन–साधारण की स्थिति का उल्लेख 'कुकुरमुत्त' करता है। इसमें किसी भी प्रकार की घटना संयोजित नहीं है, संपूर्ण कविता के केंद्र में 'कुकुरमुत्ता' ही है, शेष सारे संदर्भ, पात्र, स्थितियाँ उसके इर्द–गिर्द घूमती हैं तथा कथा उसकी सार्थकता प्रतिपादित करती है। यहाँ तक के नवाब, गुलाब, माली सब उसे इर्द–गिर्द चक्कर काटते हैं। यही इस कविता का मूल कथ्य है। सभी विद्वानों ने 'कुकुरमुत्ता' को एक व्यंग्य प्रधान कविता माना है। हास्य और विनोद उत्पन्न करने के लिए निराला ने यहाँ एक सर्वथा मौलिक और लगभग चौंका देने वाली पद्धति अपनाई है।

'कुकुरमुत्ता' की भाषिक–संरचना भी सर्वथा नए प्रकार की है। लगभग सारी छायावादी शब्दावली का यहां निषेध है। भाषा प्रयोग के तत्सम शब्दावली माधुर्य ओज और सौन्दर्य की जगह ठेठ बिहड़ और पुराने माप–दण्ड के अनुसार देशज वर्जित और काव्यात्मक शब्दों में पूरी कविता लिखी गई है। यही इस कविता की नवीनता और पक्षधरता है। प्रस्तुत कविता में कवि ने अपने समय की अनेक मान्यताओं पर तीक्ष्ण व्यंग्य किया है जो गाली–गलौच की सीमा तक पहुँच जाता है। यहाँ 'कुकुरमुत्ता' श्रमिक वर्ग का प्रतीक है। 'कुकुरमुत्ता' कविता का रचना–विधान बेजोड़ है। एक नवाब की बाड़ी में अनगिनत फूलों के बीच उगे कुकुरमुत्त पर कवि की नज़र पड़ती है उसके माध्यम से वह साधारण, महत्त्वहीन, उपेक्षित सच्चाई में अंकित करता है। इसमें फूलों की सपाट, वर्णनात्मकता से यह रचना गद्यात्मक की ओर आवश्य झुकने लगती है। इसके लिए कवि की निम्नलिखित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैः

अबे, सुन बे गुलाब
भूल मत जो पाई खुशबू, रंगोआब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा है केपीटलिस्ट

इस कविता का आधार यद्यपि कथात्मक है किन्तु प्रस्तुति के विस्तार से इसे संवाद एवं वर्णन विशिष्ट ही कहा जाएगा। 'कुकुरमुत्ता' गुलाब की भांति परममुखी अपेक्षित न होकर स्वावलम्बी है परन्तु समाज में

उसकी कोई पूछ नहीं इसी प्रकार हमारे समाज में स्वावलम्बी मनुष्य की पूछ न होकर परममुख उपेक्षी शोषिकों का सम्मान होता है परन्तु स्वावलम्बी इससे विचलित नहीं होता।

सप्रसंग व्याख्या :

मैथिलीशरण गुप्त

(1) मानस मंदिर .... विषम–वियोग।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां मैथिलीशरण गुप्त के काव्य से हैं। 'साकेत' गुप्त की प्रसिद्ध रचना है जिसमें लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के विरह का वर्णन है। राम बनवास के समय लक्ष्मण उनके साथ चले गए थे। उनकी पत्नी उर्मिला उनके विरह में तड़पती रही और उसने राजमहल में भी वनवासी जीवन बिताया। ये पंक्तियां 'साकेत' के नवें सर्ग से हैं।

व्याख्या– उर्मिला ने अपने ह्दय में पति की प्रतिमा को स्थापित करके एक विरहणी का जीवन व्यतीत किया। वह रचयं एक आरती की तरह बन कर रही और विरह में जलती हुइ। सती बन गयी। वह राजमहल के सभी सुखों को भूल गयी। उसने अपनी आँखों में अपने प्रिय की मूर्ति को बसा लिया और एक योगी की तरह तपस्या करती रहती। अपने विरह मे जलती हुई उर्मिला की स्थिति एक योगी के हठ से भी कठिन हो गयी।

विशेष – इन पंक्तियों में कवि ने उर्मिला के वियोग का वर्णन करते हुए उसके त्याग एवं सहनशीलता का मार्मिक चित्राण किया है।

(2) मिलाप या दूर..दिन दार दारा।

सप्रसंग व्याख्या – मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध रचना 'साकेत' के नवम् सर्ग से उद्धृत प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के विरह और विवशता का मार्मिक चित्राण किया। उर्मिला कहती है प्रियतम से दूरी बनी हुई है मिलाप का कोई नाम नहीं है। नवविवाहित उर्मिला का विरह बहुत ही करुणामय है। जिस प्रकार वीणा के स्वर दिर–दार–दारा निकल कर करुणा पैदा करते हैं। उसी प्रकार उर्मिला की विरह–अग्नि में से दर्द का करुण गीत बन गया है।

जयशंकर प्रसाद

(1) **ओ चिंता की पहली रेखा......................................कम्प सी मतवाली।**

सप्रसंग व्याख्या – प्रस्तुत काव्यांश जयशंकर द्वारा रचित 'कामायनी' के 'चिंता सर्ग' में से उद्धृत किया गया है। प्रलय के बाद चिंतत 'मनु' चिंता को सम्बोधित करता हैं कि ओ चिंता! तू आज पहली बार मेरे मन उत्पन्न हुई है। तू जंगल में सांप जैसी है, इसलिए जंगल रूपी संसार में भयमुक्त होकर नहीं चला जा सकता। इतनी ही नहीं तू तो शक्तिशाली पर्वत पर प्रथम विस्फोट सी भीषण हो और इतनी ही नहीं तू तो शक्तिशाली पर्वत पर प्रथम विस्फोट सी भीषण हो और इतनी कंपकंपी पैदा कर देती हो कि व्यक्ति चिंता के कारण कांपने लगता।

(2) चिंता करता हूँ...रेखाएं दुःख की।

सप्रसंग व्याख्या – अतीत का लीन वैभव विलास के नष्ट होने पर मनु जितना उसको भुलाना चाहता है उतनी ही उसकी याद आती है। भोग–विलास और सुख–सुविधाओं का स्मरण मनु को दुःखी करता है। अर्थात् चिंता व्यक्ति को दुःख देती है, बैचेन करती है और चिंतन करने में अवरोध होता है।

विशेष : कवि ने 'चिंता' मनोविकार का मनोवैज्ञानिक चित्राण किया है।

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

(1) जागो फिर एक बार

पशु नहीं, वीर..यह विश्व भार।

सप्रसंग व्याख्या : 'जागो फिर एक बार' कवि कविता में निराला ने भारतवासियों को गौरवमय अतीत को याद दिलाकर जागृत किया है। कवि देशवासियों के हौंसले को बुलंद करते हुए कहता है कि तुम पशु नहीं हो, तुम तो वीर पुरुष हो, अत्याचारी नहीं हो, वीर हो, तुम तो समय के चक्र में फंस गए हो, आज भी तुम युद्ध भूमि के बादशाह हो। छन्द विहीन कविता की तरह तुम हमेशा मुक्त रहे हो। तुम सदैव ब्रह्म में लीन हो, ऋषियों के मंत्राों में, तुम सदैव महान रहे हो। कायरता और कामुकता तो हीन भाव है, तुम तो ब्रह्म हो। सम्पूर्ण विश्व तुम्हारे चरणों की धूल है। और तुम एक बार जाग जाओ ब्रह्म हो। सम्पूर्ण विश्व तुम्हारे चरणों की धूल है और तुम एक बार जाग जाओ और विश्व को अपने शौर्य का परिचय दो।

(2) राम की शक्ति पूजा

है अमानिशा : उगलता..केवल जलती मशाल।

सप्रसंग व्याख्या : 'राम की शक्ति पूजा' निराला की सर्वश्रेष्ठ रचना है। राम–रावण युद्ध का प्रसंग इस का आधार है। प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने रावण की शक्ति के आगे राम के संशय को अभिव्यक्त किया है। कवि कहता है युद्ध पर विचार करते–करते रात हो गई। आसमान में चारों ओर घना अंधेरा छा गया, दिशा का ज्ञान तक नहीं हो रहा, वायु थम गई थी अर्थात् इतनी शान्ति थी कि पर्वत के पीछे समुद्र ही गरज रहा था। शान्त वातावरण में पर्वत ध्यान–योगी की तरह प्रतीत हो रहा था, केवल मशाल जग रही थी।

(3) कुकुरमुत्ता

आया मौसम खिला——————————————————वरना क्या तेरी हस्ती है

प्रसंगः– आलोच्य कवितांश छायावादी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'कुकुरमुत्ता' में से उद्धृत है इस कविता में कवि की प्रगतिवादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है कवि कुकुरमुत्ता और गुलाब के प्रतीकों द्वारा श्रमिक और पूँजीपति वर्ग की वास्तविकता का अंकन करता है।

व्याख्याः– कवि कहता है जब मौसम आया तो फारस से लाया गुलाब का पौधा फूलों से खिल उठा। उसकी सुन्दरता और खुशबू ने पूरे बाग पर अपना प्रभाव डाला। दूसरी तरफ गन्दगी में उगा हुआ कुकुरमुत्ता सिर उठाकर गुलाब के फूल की सुन्दरता पर व्यंग्य करता हुआ कहता है कि अबे! गुलाब के फूल यह जो तूने इतनी सुन्दरता और खुशबू पाई, याद रख यह सब तूने खाद का खून चूसकर ही प्राप्त की है। अपनी वास्तविकता को भूलकर तू डाल पर एक पूँजीपति की भांति इतरा रहा है। तूने कितने लोगों को अपना गुलाम बना रखा है जो तेरी दिन रात सेवा करते है, तू राजाओं और अमीरों का भी प्यारा है परन्तु जिसने भी तुझे हाथ लगाया है वह कांटों के कारण भाग खड़ा होता है स्वयं में तेरी कोई हस्ती नहीं। अर्थात् पूँजीपति का अस्तित्व श्रमिक वर्ग की मेहनत पर टिका हुआ है।

विशेषः–

1. कवि के प्रगतिवादी विचारों की अभिव्यंजना है।

2. पूंजीपतियों की शोभा का श्रेय कवि श्रमिक वर्ग की मेहनत और लगन को देता है।

3. शेषित वर्ग की चेतना की अभिव्यक्ति हुई।

1.4.4.1 स्वयं जांच अभ्यास

1.	निराला की रचना कुकुरमुत्ता कविता का भाव स्पष्ट करें।
	....
	....
	....

1.4.5 सारांश

निराला छायावादी कवियों में प्रसिद्ध कवि हैं। इनकी रचनाओं छायावादी, प्रगतिवादी, प्रयोगवादी, रहस्यवादी सभी प्रकार के तत्व देखने को मिलते हैं।

1.4.6 प्रश्नावली

1. निराला की क्रांति चेतना पर विचार करें।
2. निराला एक विद्रोही कवि हैं – समीक्षा करें।
3. निराला के निरालेपन पर विचार करें।

1.4.7 सहायक पुस्तकें

1. निराला : रामविलास शर्मा
2. निराला : एक आत्महेता आस्था – दूधनाथ सिंह
3. निराला का काव्य : जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव

Mandatory Student Feedback Form

https://forms.gle/KS5CLhvpwrpgjwN98

Note: Students, kindly click this google form link, and fill this feedback form once.